
UNIVERSITY OF LUCKNOW



श्रीमद्वैष्णव द्वैत सिद्धान्त प्रतिष्ठापनाचार्य श्रीमन्मध्वाचार्य
पीठाधिष्ठितानां श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्यत्वाद्यनेक
गुणगणालंकृतानांश्रीमदुत्तरादिमठाधीशानां श्रीमद्वै-
दिक सिद्धान्तप्रचारण बद्ध परिकराणां श्री श्री १०८
श्रीमत्सत्यध्यानतीर्थ मुनींद्राणां मुखकमलनिस्सृ-
तवाक्तरङ्गिणी लहरीलेशोयं

अद्वैतमत विमर्शः

संग्राहकः –

पण्डित नारायणाचार्यः

प्रकाशकः –

श्रीमन्मध्व सिद्धान्ताभिवृद्धिकारिणी सभा

द्वारा

श्री मुकुन्दलाल शर्मा गयापालः

श्री रामचन्द्राय नमः

उपोद्घात ।



"सुख ही सदा हमको रहे लेशमात्र भी दुःख न हो"

ऐसी, दुःख रहित शाश्वत सुखानुभवरूपी मोक्ष की ईच्छा, समस्त प्राणिमात्रों को होती है। यह मोक्ष भगवान् के प्रसाद के सिवाय अन्य दूसरे कारणों से नहीं होता है। यह भगवान का प्रसाद भगवान की निर्मल भक्ति के सिवाय नहीं प्राप्त होता है। वह निर्मल भक्ति भगवान के साक्षात्कार से ही होती है, वह साक्षात्कार भगवान के ध्यान के सिवाय अन्य कारणों से नही होता है, और वह ध्यान तत्वों की संशयावस्था में नहीं होता है; इसलिये तत्वों का निश्चय कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। वह तत्व निश्चय, ब्रह्ममीमांसा शास्त्र में दर्शित युक्तियों के ज्ञान (मनन) से ही होता है। इसकारण से तत्ववेत्ता गुरू के पास जाकर उनसे श्रवण कर, उसपर आयेहुए संशय भ्रमों की निवृत्ति गुरूपदिष्ट न्याय से कर लेनी चाहिये। तत्ववेत्ता गुरू से भक्तिपूर्वक श्रवण होने के लिये अन्तःकरण शुद्धी की आवश्यकता है, वह अन्तःकरण शुद्धि, अन्तःकरण के व्यापार की प्रेरणा करनेवाले ईश्वर के प्रसाद से ही होती है, इसलिये (अन्तःकरण शुद्ध होने के लिये) आप अपने वर्णाश्रमों के योग्य कर्मों का अनुष्ठान रूपी भगवान् का आराधन करना चाहिये। ऐसा वेद, ब्रह्मसूत्र, गीतारूपी प्रस्थान त्रयों से सिद्ध होता है।

इसलिये मोक्ष की इच्छा करनेवाले पुरुषों ने, मोक्ष प्राप्ति के लिये आप अपने वर्णाश्रमों को योग्य कर्मों का आचरण कर, अन्तःकरण शुद्धि द्वारा सद्गुरू से सच्छास्त्रों का श्रवण कर,—

श्रुति विप्रतिपन्नाते यदास्थास्यति निश्चला ।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योग मवाप्स्यसि ।।

इस गीता वाक्य में कहे अनुसार, नानाप्रकार के दुर्मतों के श्रवण से उत्पन्न हुए संशय भ्रमों का, ब्रह्ममीमांसा शास्त्र में कहे हुए युक्तियों से निवारण कर, तत्व निश्चय द्वारा ईश्वर के ध्यान से अपरोक्ष ज्ञान संपादन कर, भक्ति प्रसाद द्वारा बंधनिबृत्ति रूप मोक्ष की प्राप्ति होने पर बैकुण्ठादि स्थानों में, 'एतत्सामगायन्नास्ते' इस वेद में कहे अनुसार भगवान की स्तुति पूजा करते हुए, आप आपने योग्यता के अनुसार नित्य सुख का अनुभव करना चाहिये।

परमात्मा सर्वोत्तम, सर्वकर्ता जीव से भिन्न, इत्यादि जो ज्ञान, वही
नित्य सुख के प्राप्ति को कारण है।

अद्वैतमत में कहे अनुसार, "मैं ही ब्रह्म हूं" "समस्त जगत् झूठा है" इत्यादि जो ज्ञान, वह नित्य सुख के प्राप्ति (मोक्ष) को कारण नहीं है, इत्यादि ब्रम्हसूत्र; वेद, गीता इन प्रस्थानत्रयों को संमत रहनेवाला, श्रीमद्वैष्णव (द्वैत) सिद्धांत प्रतिष्ठापनाचार्य श्रीमन्मध्वाचार्य पीठाधिष्ठित, श्रीमदुत्तरादि मठाधीश, श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्यत्वाद्यनेक गुणगणालंकृत श्री श्री १०८ श्रीमत्सत्यध्यानतीर्थ श्रीपाद स्वामी महाराज के मुखकमल से, आया हुआ उपदेश इस ग्रंथ में निबंधरूप से लिखा है।

मोक्ष के साधन को कहनेवाले अनेक मत रहने पर भी अद्वैतमत का ही निराकरण करने का विशेष कारण यह है कि, "हम वैदिक हैं" ऐसा माननेवाले लोगों के लिये ही यह उपदेश किया होने से अन्य अवैदिकमतों का विचार इस ग्रंथ में किया नहीं है, प्रसंगानुसार उनका भी विचार होगा।

वैदिक कहानेवाले समस्त मत, अवांतर कुछ कुछ भेद हुआ तौभी द्वैतमत अथवा अद्वैतमत, इनदोनों में ही अन्तर्भूत होते हैं। अद्वैतमत में भी शङ्कराचार्य के अद्वैतमत को वैदिक मानकर बहुतसे लोगों का अत्यन्त दुर्गती को जानेका साधनीभूत आचरण देखकर, उनलोगोंपर निरुपाधिक कृपा से, श्रीस्वामी महाराज ने, "वह अद्वैतमत, अवैदिक बौद्धमत ही है,

वैदिक नहीं है" ऐसा पुराणवाक्यों से अद्वैतियों के स्वीकृति से, (कबूलीसे), तत्वों की तुलना से तथा पाश्चिमात्य और एतद्देशीय आंग्ल विद्या पारंगत पण्डितों के वाक्यों के आधार से सिद्ध कर दिखाया है।

ब्रह्म निर्गुण, तथा एकही सत्य है; और वह जीव से अभिन्न है। समस्त जगत् झूठा है, इत्यादि अद्वैतमत, वेद, गीता, ब्रह्मसूत्र रूपी प्रस्थान-त्रयों में न कहा होने से भी, अवैदिक है। इसलिये, मोक्ष को साधन न रहनेवाले, अवैदिक अद्वैतमत के अनुसार आचरण छोड़ कर, प्रस्थानत्रयों को सम्मत रहनेवाले द्वैतमत के अनुसार आचरण कर, नित्य सुख की प्राप्ति कर लेनी चाहिये, ऐसा इस ग्रंथ का तात्पर्य है।

यदि किसीको "अद्वैतमत अवैदिक बौद्धमत नहीं है, वैदिक ही है" ऐसा आक्षेप, भ्रम या संशय हो तो, श्रीस्वामी महाराज निवारण करने को सिद्ध हैं। इसलिये भ्रमादिकों को निवारण करके द्वैतमतानुसार आचरण करो।

अद्वैतमत वैदिक है, या द्वैतमत वैदिक है, इसका निश्चय करलेने की यदि शक्ति न हो तो, संशयावस्था में भी द्वैतमतानुसार ही आचरण करना चाहिये।

द्वैतमत अवैदिक होकर, अद्वैतमत, एक पक्ष से यदि वैदिक हुआ, तो भी, द्वैतमत के अनुसार चलनेवाले मनुष्य को कुछभी बाध नहीं हैं। क्योंकि अद्वैतमत के अनुसार जीव तो ब्रह्मरूप ही है, पाप झूठा, यज्ञ झूठे, उपासना झूठी, नरक, तम समस्त जगत् झूठा होनेसे स्वयं सिद्ध जीव की ब्रह्म रूपता तो कहीं भी जाती नहीं है, अभी न रहनेवाले, नये प्राप्त होनेवाले फल को प्रतिबंध भी नहीं होता है, अनिष्ट आनेका भी सम्भव नहीं है। इस प्रकार अद्वैतमत वैदिक सिद्ध हुआ तोभी द्वैतमतानुसार आचरण करने-वाले को कुछभी बाधक न होने से द्वैतमतानुसार ही आचरण करना चाहिये।

अद्वैतमत झूठा हुआ। (अवैदिक ऐसा सिद्धहुआ) तो अद्वैतमतानुसार चलनेवाले मनुष्य को "ईश्वरोहमहंभोगी" "असत्यमप्रतिष्ठंते" "अथेतरेदुःख-मेवापियंति" "तमात्मस्थंयेनुपश्यंतिधीरास्तेषां शांतिः शाश्वतीनेतरेषां"

"तेपियांत्यधरंतमः" इत्यादि श्रुति, पुराण, गीता, इनमें कहे अनुसार, ईश्वर की प्राप्ति न होकर, नित्य तमोरूप अधोगती ही प्राप्ति होती है, सुख की प्राप्त नहीं होती है।

"नास्तिचेन्नास्तिमेहानिः आस्तिचेन्नास्तिकोहतः"

"नास्तिचेत्" अद्वैतमत सच्चा होकर, (वैदिक होकर) द्वैतमत झूठा (अवैदिक) हुआ तो 'मे' द्वैतमतानुसार आचरण करनेवाले मुझे, "नास्ति-हानिः" कुछभी बाधक नहीं है।

"अस्तिचेत्" अद्वैतमत झूठा (अवैदिक) होकर, द्वैतमत सच्चा (वैदिक) हुआ तो "नास्तिक" 'यह लोक नहीं परलोक नहीं' इत्यादि समस्त जगत् को झूठा माननेवाला ऐसा अद्वैती "हतः" महा दुःखकर नरकाद्यनर्थ को प्राप्त होता है।

॥ सारांश ॥

अद्वैतमत वैदिक है या द्वैतमत वैदिक है, ऐसी संशयावस्था में भी द्वैतमतानुसार आचरण कर नित्य सुख का अनुभव करो।

भाषा का विशेष अभ्यास न होने से जोकुछ भाषा के दोष ग्रंथ में रह गये होंगे उसकी ओर दृष्टि न रखकर, विषय का महत्व जानकर, पाठकगणों को इस ग्रंथ का अच्छा परिशीलन करना चाहिये।

सर्वेषांहितचिंतकः—

पण्डित नारायणाचार्यः।



अनुक्रमणिका।



—:o:—

२७ पत्रांतर्गत तृतीयविषयस्य मूलभूतोयंग्रंथः।

तात्विकं प्रामाण्यं प्रमाणानां अनेनविचारेणाप्युदस्यते, नसांव्यावहारिकं। तथाच भिन्नविषयत्वान्न सर्वप्रमाणविरोधः॥ (भामती)

२७ पत्रांतर्गत चतुर्थविषयस्य मूलभूतोयंग्रंथः।

प्रमाणानिस्वगोचरे प्रवर्तमानानि तत्वमिदमित्येव प्रवर्तंते। अतात्विकत्वंतु तद्गोचरस्यान्यतो बाधकादवगंतव्यं, नपुनः सांव्यवहारिकंनःप्रमाण्यं॥ नतु तात्विकमित्येवंप्रवर्तंते। बाधकं च अतात्विकत्वमेषां। तद्गोचरबिपरीत तत्वोपदर्शनेनदर्शयेत्। यथाशुक्तिकेयं न रजतं........इत्यादि॥ (भामती)

॥ अद्वैतमत वैदिक नहीं है ॥

ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या जीवोब्रह्मैवनापरः ।
अनेनवेद्यं सच्छास्त्रमिति वेदांत डिंडिमः ॥ (ब्रह्मज्ञानावलो)

इसी श्लोक से शङ्कराचार्य ने अपने मत में,—

(१) ब्रह्म एकही सत्य है, (२) जगत् मिथ्या याने ब्रह्म में आरोपित है, (३) जीव ब्रह्म ही है। इन तीन तत्वों को स्वीकार किया है ऐसा सिद्ध होता हैं। उन तत्वों में से 'ब्रह्म एकही सत्य है' इस तत्वका 'एकही' इतना भाग यदि पृथक् निकालदे तो 'ब्रह्म सत्य है' इतना अवशिष्ट भाग श्रुति, ब्रह्मसूत्र, गीता, इन प्रस्थान त्रयों से सिद्ध हुआ तोभी, 'जग मिथ्या है' 'जीव ब्रह्मही है' ये तत्व, वेद, वेदों के अर्थ को निर्णय करनेवाले ब्रह्मसूत्र तथा गीता, इन प्रस्थानत्रयों से सिद्ध न होने के कारण, इन तत्वों को प्रतिपादन करनेवाला अद्वैतमत वैदिक नहीं है। ऐसा स्थालीपुलाकन्याय से हम प्रदर्शित करते हैं।

बृहदारण्यकोपनिषद् का व्याख्यान करते समय, "उपनिषदों के तत्वमस्यादि वाक्यों ने जीव ब्रह्म का ऐक्य प्रतिपादन कियातो, तत्वमस्यादि वाक्यों को 'य आत्मनितिष्टन्' इत्यादि जीवब्रह्म को भेद प्रतिपादन करनेवाले, तथा 'तत्तेजोसृजत' इत्यादि सृष्टि प्रतिपादन करनेवाले उपनिषदों के वाक्य से विरोध आता है, याने 'स्वार्थविघात' होता है इतनाही नहीं, तो भेद-प्रतिपादन करनेवाले समग्र कर्मकांड तथा भेद का निश्चय करादेनेवाले प्रत्यक्ष तथा अनुमान इनसेभी विरोध आता है। इसलिये तत्वमस्यादि वाक्यों को अप्रमाणता तोभी स्वीकारनी चाहिये, अथवा, अभेद पर अर्थ छोड़ कर तत्वमस्यादि वाक्यों का जोवेश्वर भेद पर तोभी अर्थ करना चाहिये" ऐसी शंका लेकर, "वेदोंका जीवब्रह्म के ऐक्य में तात्पर्य होनेसे, भेद प्रतिपादन करनेवाले 'य आत्मनितिष्टन्' इत्यादि वाक्योंसे प्रतिपादित भेद झूठा कहना चाहिये। अथवा प्रत्यक्ष से सिद्ध हुए भेद का अनुवाद 'य आत्मनितिष्टन्' इत्यादि वाक्य करते हैं। भेद के विषय में उनका तात्पर्य नहीं है, ऐसा कहना चाहिये" इसप्रकार शङ्कराचार्य ने समाधान किया है।

शङ्कराचार्य के इनवाक्यों से, तत्वमस्यादि पांच छे वाक्यों को छोड़ कर समस्त वेद, प्रत्यक्ष तथा अनुमान ये सब भेद का ही प्रतिपादन करते हैं ऐसा सिद्ध होता है।

१—इसप्रकार भेद का प्रतिपादन करनेवाले बहुत से वाक्य होमेपर भी, उन वाक्यों से प्रतिपादित भेदको छोड़कर, चार, छे वाक्यों से प्रतीत होनेवाले अभेद का स्वीकार करना 'बहुबाधस्यअन्याय्यत्वात्' 'मेझांरिटी-इजदिला' 'बहुमतसो कानून' इस न्याय से विरुद्ध होता है। २—पांच, छे वाक्यों कोहो 'अखंडार्थ बोधक' (तत् , त्वम् , असि, अहं, ब्रह्म, अस्मि, इत्यादि पद, केवल चित् ऐसे अर्थ को समझादेनेवाले) ऐसा अद्वैतीलोग स्वीकार करतेहैं इसकारण उनवाक्यों से जीवब्रह्म का ऐक्य सिद्धनहीं होताहै, तथा भेद प्रतिपादन करनेवाले अन्य वाक्यों को बाधभी नहीं आता है। ३—अखंडार्थ बोधकत्व छोड़कर, तत् , त्वम् , असि, इत्यादि पदोंसे उपस्थित पदार्थों काही अन्वय बोध होता है ऐसा स्वीकार किया तोभी, सर्ववेदांतसिद्धांतसारसंग्रह के वाक्यों से तत् इत्यादि पदसे मुख्य वृत्तिद्वारा बोधित जो सर्वज्ञत्वादि विशिष्ट ब्रह्मचैतन्य, उससे त्वं इत्यादि पदसे बोधित रहनेवाले अल्पज्ञत्व विशिष्ट जीव चैतन्य का ऐक्य कहने से प्रत्यक्ष से तथा अनुमान से विरोध आता है। इस-लिये, तत् त्वम् इत्यादि पदोंकी मुख्य वृत्ती को छोड़कर अमुख्यवृत्ती से (लक्षणासे) चित् चित् इतनाही अर्थ लेकर, चित् चित् है। ऐसा चितों का अभेद कहना चाहिये। ऐसा शङ्कराचार्यादि अद्वैतिलोग कहते हैं। ऐसा स्वीकार करनेपर भी निम्नलिखित अनेक दोष आते ही हैं। १ - मुख्यार्थ को छोड़कर यदि लक्षणा वृत्तीसे दूसरा अर्थही स्वीकार करनाहै तो वह अद्वैतपर ही क्योंलेना चाहिये ? 'त्वं' तुम, 'तत्' उसभगवान के अधीन हो, इत्यादि अर्थ, क्यों नहीं लेना चाहिये ? २—चित् का पहिले ज्ञानही न होने से, लक्षणावृत्तीसे चित का बोध नहीं होता है। इत्यादि अनेक दोष आते हैं तदेतत्सत्यं विश्वसत्यं इत्यादि श्रुतिसे जगत् सत्यहै ऐसा सिद्ध होता है गीता में तथा सूत्रों में भी जगत् मिथ्या; और जीवब्रह्म का ऐक्य नहीं कहा है इस लिये अद्वैतमत तत्व वैदिक नहीं है; ऐसा वैदिक सिद्धांतग्रंथ का सारांश है।

निवेदक - नारायण शर्म्मा।

॥ श्री वासुदेवाय नमः ॥

श्री विष्णु भगवान्
के
बुद्धावतार का चरित्र।

दैत्यान् मोहयितुं जगाद भगवान् बुद्धावतारो हरिः।
शून्यं ज्ञानं तत्वमतोमृषान्यदखिलं वेदो न मानंत्विति॥

आसुरी प्रकृतिवाले लोग वेदों को प्रमाण मान कर माननेलगे कि श्री विष्णुभगवान् सर्वोत्तम, जीव जड़ों से अलग और सर्वगुणपूर्ण हैं तथा ब्राह्मणादिवर्ण ब्रह्मचर्यादि आश्रम, यज्ञ, देव, वेद, तीर्थ इत्यादि सब जगत

भागवत - देवद्विषां निगम वर्त्मनिविष्ठितानां पूर्भिर्मयेन विहिता भिरदृश्यतूर्तिः। लोकान्घ्नतां मतिविमोहमतिप्रलोभंवेषं विधाय यदभाषत औपधर्म्यं ॥ भाग० २।७।३७॥

ततः कलौ संप्रवृत्ते संमोहाय सुर द्विषां।
बुद्धोनाम्ना जिन सुतः कीकटेषु भविष्यति॥
॥ भाग० ७।३।८४॥

तात्पर्य—देवता द्वेष करनेवाले दैत्यलोग वेदों को प्रमाणभूत मान कर वेदोक्त कर्म करने लगे। मयासुर निर्मित नगरों में निवास कर सज्जनों को त्रास देने लगे उस समय भगवान् ने उन दैत्यों को प्रवंचनार्थ बुद्ध रूप धारण किया और वेद विरुद्ध धर्मोपदेश किया।

(२) कलियुग में दैत्य मोहनार्थ कीकट देश में जिनपुत्र बुद्ध नाम से श्री विष्णु भगवान् होंगे।

सच्चा है झूठा नहीं है। "विष्णु भगवान् एक सर्वोत्तम हैं"—यह जो ज्ञान है वही ईश्वर का प्रसाद प्राप्त करा कर अधिकारी जीवों को प्रकृति बन्धन से छुड़ाता है। छूटने के बाद जीव का, वैकुण्ठादि स्थानों में अपने २ स्वरूपानन्द का अनुभव करते हुए, ईश्वर के दास-भाव से रहना ही मुख्य फल है।

ऐसा निश्चय कर वेदों में कहे हुए धर्मों के आचरण से अत्यन्त बलिष्ठ हुए एवं उसी बल से दैव स्वभाववाले इन्द्रादि देवों को पीड़ा पहुंचाने लगे। तब इन्द्रादि देवों ने दैत्यों से अपनी रक्षा के लिये परमात्मा से प्रार्थना की। तब भगवान् ने—

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

शुद्धोदनसुतो बुद्धो मोहयिष्यामिमानवान्।

॥ भारत शांति ३४७ अ० ४३ श्लोक॥

तात्पर्य—हम शुद्धोदन पुत्र बुद्ध होकर मनुष्यों में उत्पन्न हुए दैत्यों को मुग्ध करेंगे।

वाह्यार्थ विज्ञान शून्यवाद त्रयं इतरेतरविरुद्ध मुपदिशता सुगतेन स्पष्टीकृतमात्मनोसंबद्धप्रलापित्वं। प्रद्वेषोवा प्रजासु विरुद्धार्थप्रतिपत्या विमुह्येयुरिमाः प्रजाः॥ इति॥ शङ्कर सूत्र भाष्य २।२।३२॥

सर्वज्ञस्य भगवतो वासुदेवस्य इतिहासपुराणयोः बुद्धत्व प्रसिद्धेःतस्य असंबद्ध प्रलापित्वमयुक्त मित्याशंक्याह प्रद्वेषोवेति।

वैदिक पथ विरुद्ध जंतू पलक्षणार्थं प्रजाग्रहणं।

॥ आनन्दगिरि २।२।३२॥

सर्वज्ञस्य कथं विरुद्ध प्रलापः तत्राह प्रद्वेषोवेति वेद वाह्याः अत्र प्रजाः ग्राह्याः।

तात्पर्य—वासुदेव परमात्माने वेदवाह्य याने वेदों को अप्रमाण माननेवाले लोगों को मोहित के लिये बुद्ध रूप धारण किया।

इस प्रकार अपने प्रतिज्ञानुसार सज्जनों की रक्षा और दुष्टों का नाश करने के लिये बुद्धावतार लिया और वेद विरुद्ध दो प्रकार के उपदेश दिये।

(१) ज्ञान एक सच्ची वस्तु है जिसमें सब जगत कल्पित (मिथ्या) है (याने जो न था, न है, न होगा उसी को मिथ्या कहते हैं)। ज्ञान के अतिरिक्त दूसरी कोई वस्तु नहीं है, ज्ञान रूप होना ही मोक्ष है।

(२) शून्य एक सत्य वस्तु है तथा शून्य में समस्त जग कल्पित (मिथ्या) है। शून्य के सिवाय कोई भी वस्तु नहीं। "मैं शून्य हूं २" इस प्रकार ध्यान करने के परिणामस्वरूप से शून्य रूप होजाना ही मोक्ष है।

प्रसीद नाथ दैत्येभ्यः त्राहिनः शरणार्थिनः। ३६
त्रैलोक्य यज्ञ भागाश्च दैत्यैर्ल्हादपुरोगमैः॥
हृतानी ब्रह्मणोप्याज्ञामुल्लंघ्य परमेश्वर।
स्ववर्णधर्माभिरता वेदमार्गानुसारिणः॥
नशक्यास्तेरयोहंतुमस्माभिस्तपसा वृताः।
तमुपायमशेषात्मन् अस्माकं दातुमर्हसि॥
येन तानसुरान्हंतुं भवेम भगवन् क्षमाः।

॥ विष्णु पुराण ॥

इत्युक्तो भगवांस्तेभ्यो मायामोहं शरीरतः।
समुत्पाद्य ददौविष्णुः प्राहचेदं सुरोत्तमान्॥
मायामोहोयमखिलान् दैत्यांस्तान् मोहयिष्यति।
ततोवध्या भविष्यंति वेदमार्ग बहिष्कृताः॥
इत्युक्ताः प्रणिपत्यैनं ययुर्देवा यथागतं।
मायामोहोपितैः सार्धं ययौयत्र महासुराः॥
....
पुनश्चरक्तांबरधृक् मायामोहो जितेंद्रियः।
अन्यानाहासुरान् गत्वा मृदुल्पमधुराक्षरं॥
विज्ञानमयमेवैतदशेषमवगछत।

इस प्रकार बुद्धदेवने वेद विरुद्ध दो मतों के उपदेश से उन असुरों को वेद मार्ग से विमुख किया। तब दैत्यलोग वैदिक धर्म से भ्रष्ट होकर बलहीन हो गये एवं उसी निर्बलता से देवताओं से पराजित हुए।

योग्यान् योजयितुंधिया विमलया नाभावइत्यादिभिः।
सूत्रैर्दूषित मातनोत् स्वयमसौ व्यासात्मनातन्मतं ॥

इस बौद्धमत के उपदेश से दैव स्वभावी साधुलोगों को भी "ज्ञान ही एक सत्य है शेष सब मिथ्या है या एकमात्र शून्य सत्य है और सब प्रपञ्च (विश्व) मिथ्या है" ऐसा भ्रम होने लगा। ऐसा भ्रम न हो इसलिये

बुध्यध्वं मेवचः सम्यक् बुधैरेव मिहोदितं ॥
जगदेतदनाधारं भ्रांति ज्ञानार्थतत्परं ।
रागादिदुष्टमत्यर्थं भ्राम्यते भवसंकटे ॥
मायामोहः सदैतेयान् धर्ममत्याजयन्निजं ।
तथा तथा त्रयीधर्मं तत्यजुस्तेयथायथं ॥
तेप्यन्येषांतथैवोचुः ।

तात्पर्य—हे नाथ! दैत्यों से हमारी रक्षा कीजिये इसी इच्छा से हम आपके पास आये हैं। हमपर प्रसन्न हो। दैत्यों ने हमारे सब यज्ञ-भाग लेलिया है। और वे वेदों को प्रमाण मान कर वेदोक्त वर्णाश्रम कर्म का पालन कर रहे हैं। उस कर्म के करने से वे बड़े तेजस्वी बलवान होगए हैं। उनका पराजय हमलोग नहीं कर सकते हैं इसलिये उनके नाश का उपाय हमको बता दीजिये। देवों की ऐसी प्रार्थना सुनकर श्री विष्णु भगवान् ने मायामोह को उत्पन्न किया और देवताओं को कहा कि हमारा मायामोह सब दैत्यों को मोहित करेगा। इस से वेदों को अप्रमाण मानकर वेदोक्त कर्म दैत्यलोग छोड़ देंगे तथा कर्म छोड़ने से कर्मज तपोबल भंग हो जायगा। तब तुमलोग उन दैत्यों का पराजय (नाश) कर सकोगे, ऐसा भगवानने कहा।

वेदव्यास रूप से ज्ञान ही एक मात्र सत्य है और सब जगत झूठा है ऐसा विज्ञानवादी बौद्धमत, शून्य ही एकमात्र सत्य है, एवं समस्त जगत् मिथ्या है ऐसा शून्यवादी बौद्धमत, इन दोनों अवैदिक मतों का "नाभाव उपलब्धेः" इत्यादि सूत्रों से खण्डन किया और सज्जनों को भ्रम से बचाया।

ऐसे श्री विष्णु भगवान् ने व्यास रूप और बुद्ध रूप से सज्जनों का त्राण और दुष्ट दैत्यों का नाश किया।

ऐसी आज्ञा पाकर मायामोहने दो वेद विरुद्ध मतों का उपदेश किया।

(१) ज्ञान एक सच्चा और बाकी सब मिथ्या है।

(२) शून्य एक सच्चा बाकी सब झूठा है।

ऐसे वेद विरुद्ध दोनों उपदेशों से जब उन दैत्यलोगोंने वेदों का प्रमाण—माननेवाली बुद्धि को छोड़ दिया और वेदोक्त कर्मोंका परित्याग करने के कारण बल हीन हो गये। तब देवता लोगों ने उनका नाश किया।

द्वौभूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एवच।
दैवीसंपद्विमोक्षाय निबंधायासुरीमता ॥

॥ गीता ॥

तात्पर्य—लोगों में दो प्रकार की सृष्टि है, दैवी और आसुरी उनमें दैवीसंपत मोक्ष का कारण है और आसुरीसंपत् अत्यन्त बंधन याने "अंध तमो" नामक नरक प्राप्ति का कारण है।

——:०:——

रुद्राविष्ट शंकराचार्य का चरित्र।

"कांश्चिन्मोहयितुमतदेव च मतम्
प्रख्यापयन्वैदिकम् रुद्राविष्ट तनू
रपार्थ मवदत् वेदस्यकालान्तरे"

पार्वती जी का प्रश्न—

हे सुरश्रेष्ठ रुद्र! वेदों में भस्म धारण करना निन्दित है सो आप इसे क्यों करते हैं। मेरे हृदय में ऐसी शंका है, कृपया उसका सस्नेह समाधान कीजिये।

महादेव जी का उत्तर—

स्वायम्भुवमन्वन्तरमें नमुचि प्रभृति दैत्यगण, वेदोक्त-धर्माचरण में प्रवृत्त होकर, 'विष्णु सर्वोत्तम हैं' यह मत स्वीकार करते हुए, सर्व पापरहित

पार्वत्युवाच ॥ भगवन् परमंगुह्यं पृच्छामिसुरसत्तम ॥
मयिप्रीत्यासमाचक्ष्व संशयोवर्ततेभृशं ॥
कपाल भस्मचर्मास्थि धारणंश्रुतिगर्हितं ॥
तत्त्वयाधार्यतेदेव! गर्हितंकेन हेतुना ॥

वसिष्ठउवाच ॥ इतिदेव्याहरःपृष्टो रहस्येजनवर्जिते ॥
उवाचपरमंगुह्यं यद्यदाचरितंस्वकं ॥

शिवउवाच ॥ श्रुणुदेवि प्रवक्ष्यामि यद्गुह्यं परमाद्भुतं ॥
नवक्तव्यं त्वयादेवि जनेषुकथितंमया ॥
अपृथक्त्वाच्छरीरस्य वक्ष्यामितवसुव्रते ॥
नमुच्याद्यामहादैत्याः पुरास्वायंभुवेंतरे ॥
महाबला महावीर्या महावीरा महौजसः ॥

तथा शुद्ध होकर उपरोक्त धर्माचरण से बड़े तेजस्वी और बलिष्ठ हुए तथा इन्द्रादि देवताओं को पीड़ा पहुंचाने लगे। पीड़ित देवगण भगवान विष्णु की शरण गये और कहा—"हे भगवन्! तपोबल से सर्वपाप रहित दैत्यों को पराजित करना हमारे लिये असम्भव है। अतएव आप हमारी सहायता करें। देवताओं की यह प्रार्थना सुनकर भगवान ने उत्तर दिया—"तुम भय का त्याग करो। हम शीघ्रही दैत्यों का पराजय करायँगे। देवताओं को इस प्रकार आश्वासित कर हमें (रुद्र को) आदेश प्रदान किया कि—'हे रुद्रदेव! तुम देवद्वेषी दैत्यों को मोहाभिभूत करने के लिये भस्मादि धारण करो मोह उत्पन्न करनेवाले ग्रंथों का निर्माण करो और दूसरेलोगों से भी इस कार्य' को कराओ। परिणाम स्वरूप, वे सत्य धर्म से परे होकर मोह-जाल में फँस जायँगे और हम (विष्णु) से विमुख होकर मेरी प्रधानता को अस्वीकार करेंगे एवम् हमारे निर्मित जगत की सत्यता पर अविश्वास करते हुए श्रुतिनिन्दित भस्मादिधारण कर्म करने के कारण वे

सर्वेविष्णुरताःशुद्धाः सर्वपापविवर्जिताः ॥
त्रयीधर्मवृताः सर्वेभग्नाइन्द्रपुरोगमाः ॥
विष्णोः समीपमागम्य भयार्त्ताः शरणंगताः ॥

देवाउचुः ॥ अजेयान् सर्वदेवानां तपोनिर्धूतकल्मषान् ॥
त्वमेवैतान् महादैत्यान् जेतुमर्हसिकेशव ॥

महादेवउवाच । इत्याकर्ण्यहरिर्वाक्यं देवानां च भयानकं ॥
तान्समाश्वास्यदिक्पालान् मामाहपुरुषोत्तमः ॥

श्रीभगवान् उवाच ॥ त्वंहिरुद्रमहाबाहो मोहनार्थेसुरद्विषां ॥
पाषंडाचरणंधर्मं कुरुष्वसुरसत्तम ॥
तामसानिपुराणानि कथयस्व च तान्प्रति ॥
मोहनानि च शास्त्राणि कुरुष्व च महामते ॥
त्वमेवधृतवान् लोकान् मोहयस्वजगत्त्रये ॥

पतित हो जायँगे। हे पार्वती! भगवान की आज्ञा सुनकर हमने प्रार्थना की कि हे भगवन्! आपके आज्ञानुसार कर्म करने से स्वयम् मेराही नाश निश्चित है। इसलिये मेरा भस्मादि धारण करना और असच्छास्त्र का निर्माण दोनो ही असम्भव है। साथही मेरे लिये आपका आज्ञोल्लङ्घन करना भी दुःखद है।

मेरी यह प्रार्थना सुनकर भगवान ने कहा—

"मेरी आज्ञा से इन कर्मों को सम्पादन करने से तुम्हारा नाश नहीं हो सकता। देवताओं के त्राण और दुष्टों के ह्रास के लिए तुम्हें इतनाही करना चाहिये।

तथापाशुपतं शास्त्रंत्वमेव कुरुसत्कृतः ॥
भस्मास्थिधारिणः सर्वे भविष्यंतिह्यचेतसः ॥
तेषांमतमधिष्ठाय सर्वदैत्याः सनातनाः ॥
भवेयुस्ते मद्विमुखाः क्षणादेवनसंशयः ॥
मतमेतदवष्टभ्यपतंत्येव न संशयः ॥
महादेवउवाच ॥ तच्छ्रुत्वाहं यथोक्तंतु वासुदेवेन भामिनि ॥
सुमहद्वदनोदीनो बभूवात्र वरानने ॥
नमस्कृत्वाथतंदेव मभ्रुवं परमेश्वरं ॥
त्वयोदितमिदंदेव करोमियदिभूतले ॥
तस्मान्नाशायमेनाथ भविष्यति न संशयः ॥
तन्नशक्यं मयाकर्तुमेतत्कृत्यं हरेऽधुना ॥
त्वदाज्ञापिचनोल्लंघ्या एतद्दुःखतरमहत् ॥
एवमुक्तेततोदेवि समाश्वास्य च मांपुनः ॥
आत्मनाशायते नात्र भवत्वित्याहमांहरिः ॥
देवतानां हितार्थाय कुरुष्ववचनंमम ॥
वेदवाह्यानिशास्त्राणि सम्यगुक्तंमयानघे ॥
इदंमतमवष्टभ्यदुष्टाः सर्वे च राक्षसाः ॥
भगवद्विमुखाःसर्वे बभूवुस्तमसावृताः ॥

विष्णु भगवान के इस आश्वासन से हमने उनकी आज्ञा का पूर्ण पालन किया। फलस्वरूप, असच्छास्त्रों के चलते "विष्णु सर्वोत्तम हैं" इस परम ज्ञान से वर्जित होकर, हमारा अनुकरण करके 'भस्मादि धारण' करते हुए पतन की ओर अग्रसर हुए। तमोगुणयुक्त हो सर्वधर्माचरण से भ्रष्ट होकर अधोगति को प्राप्त हों, भस्मादि धारण करने का यही हमारा उद्देश्य है।"

महादेव जी के ऐसे कथन पर पुनः पार्वतीने प्रश्न किया—

उन असच्छास्त्रों (तामस) का क्या क्या नाम है और उनके निर्माता कौन हैं यह हमें बतलाइये ?

भस्मादिधारणंकृत्वा महोग्रतपसावृताः ॥
मामेवपूजयांचक्रुर्म्मांसासृक् चंदनादिभिः ॥
मत्तोवरप्रदानानि लब्ध्वामदबलोद्धताः ॥
अत्यंतविषयासक्ताः कामक्रोधसमन्विताः ॥
सत्वहीनास्तुनिर्वीर्या जितादेवगणैस्तदा ॥
सर्वधर्मपरिभ्रष्टाः कालेयांत्यधमांगतिं ॥
येसेमतमवष्टभ्य चरंतिपृथिवीतले ॥
सर्वधर्मैश्चरहिताः पश्यंतिनिरयंसदा ॥
एवंदेवहितार्थायवृत्तिर्मे देविगर्हिता ॥
विष्णोराज्ञां पुरस्कृत्य कृतंभस्मास्थिधारणं ॥
बाह्यचिन्हमिदंदेवि मोहनार्थायविद्विषां ॥
अथांतर्हृदयेनित्यं ध्यात्वादेवंजनार्दनं ॥
पार्वत्युवाच ॥ तामसानिचशास्त्राणि समाचक्ष्वममानघ ॥
संप्रोक्तानिचतैर्विप्रैर्भगवद्भक्ति वर्जितैः ॥
तेषांनामानिक्रमशः समाचक्ष्वसुरेश्वर ॥
रुद्रउवाच ॥ शृणुदेविप्रवक्ष्यामि तामसानि यथाक्रमं ॥
तेषांस्मरण मात्रेण मोहःस्याद्ज्ञानिनामपि ॥
प्रथमंहिमयैवोक्तंशैवं पाशुपतादिकं ॥

महादेव जी का उत्तर—

हमने पाशुपत-शास्त्र बनाया, और हमारी शक्ति से युक्त कणाद ने वैशेषिक, गौतम ने न्याय, कपिलने सांख्य, तथा धिषणने चार्वाक, बुद्धने जो बौद्ध-शास्त्र दैत्यों के नाशार्थ बनाये वे ही असच्छास्त्र (प्रच्छन्न बौद्धशास्त्र) वेदों का रंग चढ़ाकर कलियुग में शङ्कराचार्य नामक ब्राह्मण में प्रविष्ट हो 'मायावाद' के नाम से स्वयम् हमने ही बनाया। उस शास्त्र में हमने इन्हीं नीचे लिखी बातोंका लोगोंको भ्रममें रखने के लिये, निरूपण किया है।

वे ये हैं—

१. वेदों का सच्चा अर्थ छोड़कर निन्दित अर्थ प्रतिपादन।

२. कर्म का त्याग।

३. जीव-ब्रह्म का ऐक्य।

४. परब्रह्म निर्गुण। इत्यादि

मच्छक्त्यावेशितैर्विप्रैः प्रोक्तानिचततःशृणु ॥
कणादेनतुसंप्रोक्तं शास्त्रंवैशेषिकंमहत् ॥
गौतमेनतथान्यायं सांख्यंतुकपिलेनवै ॥
धिषणेनतथाप्रोक्तं चार्वाकमतिगर्हितं ॥
दैत्यानांनाशनार्थाय विष्णुनाबुद्धरूपिणा ॥
बौद्धशास्त्रमसत्प्रोक्तं नग्ननीलपटादिकं ॥
मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नंवौद्धमुच्यते ॥
मयैवकथितंदेवि कलौब्राह्मणरूपिणा ॥
अपार्थश्रुतिवाक्यानां दर्शयन्लोकगर्हितं ॥
स्वकर्मरूपंत्याज्यत्वमत्रैव प्रतिपाद्यते ॥
सर्वकर्मपरिभ्रष्टैर्वैधर्मत्वं तदुच्यते ॥
परेशजीवयोरैक्यं मयातुप्रतिपाद्यते ॥
ब्रह्मणोस्यस्वयंरूपं निर्गुणंवक्ष्यतेमया ॥
सर्वस्यजगतोप्यत्र मोहनार्थंकलौयुगे ॥
वेदार्थवन्महाशास्त्रं माययायदवैदिकं ॥
मयैवकथितं देवि जगतांनाशकारणात् ॥

इस प्रकार पद्मपुराण, वाराहपुराण इत्यादि में कहे अनुसार कालांतर में असुर लोग, अवैदिकी बोद्ध मत पर विश्वास न रखकर, वेदों के विषय में प्रामाण्य बुद्धि से युक्त होकर, वेदोक्त धर्माचरण कर, " विष्णु भगवान् सर्वोत्तम हैं " ऐसा मान कर, वेदोक्त धर्माचरण के प्रभावसे, इन्द्रादि देवताओं को जब बाधा देने लगे, तब " दैत्यों से हमारी रक्षा कीजिये " ऐसी इन्द्रादि देवोंने भगवानसे प्रार्थना की। ऐसी प्रार्थना सुनकर दैत्यों को धर्म से भ्रष्ट करने के लिये, तथा " विष्णु सर्वोत्तम हैं " इस ज्ञान से रहित करने के लिये, भगवान के आज्ञानुसार, रुद्रने शङ्कराचार्य में प्रविष्ट होकर, अवैदिक बौद्धमतरूपी" अद्वैत मत को" वेदों का अपार्थ (झूठा अर्थ) कर, तथा उसे वैदिक मत कह कर, भ्रम उत्पन्न होने योग्य स्थिति उत्पन्न कर डाली यज्ञ झूठे हैं, ब्राम्हणादि वर्ण झूठे हैं, वेद झूठे हैं, गङ्गादि तीर्थ झूठे हैं, इंद्रादि देव झूठे हैं तथा स्वर्गादि लोक भी झूठे हैं, भगवान श्री विष्णु का सर्वोत्तमत्व, सर्वज्ञत्व, जगत्कर्तृत्व भी झूठा है, ऐसा उपदेश करके असुर लोगों को वेदोक्त धर्म से पराङ्मुख किया। "भगवान सर्वोत्तम हैं" इस ज्ञानसे भी रहित करके, वेदोक्त शंखचक्रादि विष्णु चिन्ह धारण करना छुड़वा दिया। आप स्वयं वेद निंदित भस्मादि धारण करके, उन दैत्य लोगों सेभी भस्मादि धारण करवाकर उन्हें निर्बल किया। और उन्हीं कारणोंसे दैत्यगण इंद्रादि देवताओं से पराजित भी हुए। इस प्रकार देवताओं की रक्षा के लिये और असुरों के मोहार्थ रुद्राविष्टशंकराचार्यनें अद्वैत मत का उपदेश किया।



योग्यान् योजयितुं धिया विमलया ।
नाभाव इत्यादिभिः ॥
सूत्रैः खंडित माह बौद्ध दलन ।
व्याजेन तच्छंकरः ॥

ऐसे अवैदिकी आसुरी लोगों को वंचन करने के लिये, रुद्राविष्ट शंकराचार्य नें, वेद, ब्रह्मसूत्र, गीता इनका विरुद्धार्थ करते हुऐ, बौद्धों के विज्ञान तत्व को, तथा शून्य तत्व को ब्रह्म ऐसा नाम रक्खा, और बतलाया कि, ब्रह्म (शून्य-विज्ञान) में समस्त जगत् कल्पित है, ब्रह्म (विष्णु सर्वोत्तम नहीं हैं; ब्राह्मणादि वर्ण, ब्रह्मचर्यादि आश्रम, स्नान, संध्या, यज्ञ, देवता, वेद, गंगादि-तीर्थ, सब झूठे हैं, ऐसे अवैदिक बौद्ध मत को ही, वैदिक अद्वैत मत के नामसे, रुद्राविष्टशंकराचार्य के प्रसिद्ध करने के कारण वैदिक दैवी संपत्तीमान् लोगों को भी," विज्ञान अथवा शून्य एक ही तत्व है, समस्त जगत् झूठा है, विज्ञान रूपी ब्रह्म से अतिरिक्त बाह्य प्रपंच नही है." ऐसा भ्रम होने से, वे भी वैदिक धर्माचरण को छोडकर, विष्णुसर्वोत्तम हैं, इस ज्ञानसे रहित होकर अधोगति को प्राप्त होंगे, इस प्रकार होना उचित नहीं है, इसलिऐ साधु जनोंपर दया दृष्टि रख कर, "विज्ञानातिरिक्त बाह्य प्रपंच नहीं है, ब्राह्मण वर्णादि समस्त जगत् झूठा है," ऐसे बौद्ध सिद्धांतो का अर्थात् अपने अद्वैत मत का भी, 'नाभाव उपलब्धेः' इत्यादि सूत्रोंकी व्याख्या करते हुऐ रुद्राविष्टशंकराचार्य नें खंडन किया, तथा भ्रम से सज्जनों को रक्षा की।

पद्म पुराण, विष्णुपुराण, वायुपुराण, भागवत, भारत इत्यादि पुराण, तथा शंकराचार्य प्रभृति अद्वैत वादियों के ग्रंथ, इनके आधारसे, जैसे भगवान् ने असुर लोगोंके मोहनार्थ बौद्धरूप धारण कर, बौद्ध मत का उपदेश किया था, उसी प्रकार रुद्राविष्टशंकराचार्यने भी असुरों के मोहनार्थ अवैदिक बौद्ध मत को ही वैदिक अद्वैत मतके नामसे प्रसिद्ध किया; ऐसा प्रमाणित होता है।

जिस प्रकार दैवी संपत्तिमान् सज्जनों को भ्रमसे बचाने के लिये

भगवान् ने वेदव्यास रूप से ब्रह्मसूत्र का निर्माण करके, बुद्ध रूप से आप स्वयं किये हुए बौद्धमत का खंडन किया। उसी प्रकार वेदव्यास जीके किये हुए सूत्रों के व्याख्यान के व्याज से, अपने कहे हुए जगत् मिथ्या (ज्ञानातिरिक्त कुछ नहीं है) इत्यदि अद्वैत मत का खंडन करके, सज्जनों को भ्रमसे बचाया।

इसलिये सज्जनो! बुद्ध भगवान्ने अयोग्य लोगोंके मोहनार्थ कहे हुए बौद्ध तत्वोंका, तथा रुद्राविष्टशंकराचार्यने असुर लोगों के मोहनार्थ कहे हुए 'जगत् झूठा है इत्यादि अद्वैत तत्वों को स्वीकार न करके, 'भगवान् विष्णु सर्वोत्तम हैं, ब्राह्मणादि वर्ण, ब्रह्मचर्यादि आश्रम, स्नान, संध्या, यज्ञ, इन्द्रादि देव, स्वर्गादि, परलोक गङ्गादि तीर्थ इत्यादि समस्त जगत् सच्चा है, ऐसा मानकर वेदोक्त अपने अपने वर्णाश्रम विहित कर्म करके, 'तत्कुरुष्व मदर्पणम्' इस प्रकार गीता में कहे अनुसार भगवान को अर्पण कर, कर्माचरण करते हुए, शास्त्रों का श्रवन, मनन, ध्यान करके भगवान का अपरोक्ष ज्ञान संपादन करके भगवान के अनुग्रह से प्रकृति बंध से छूट कर आनंदानुभव करना चाहिये।

इति ते ज्ञान माख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु॥

इस प्रकार हमने अत्यंत गुह्य तत्वों को कहा है। इनका विचार करके, इच्छानुसार, योग्यतानुसार आचरण करो। फिर आचरणनुसार फल प्राप्त होगा।

॥ इति शं सज्जनानाम् ॥



प्रकरण २रा।

बौद्धों का विज्ञानवाद तथा अद्वैतियों का अद्वैतवाद दोनों एक हैं।



इस विषय में पीछे कहे हुए केवल पुराण वाक्य ही आधार न रह कर, शङ्कराचार्य तथा उनके परम गुरू गौडपादाचार्य प्रभृति अद्वैतवादियों के वाक्य, तथा दोनों मतों के तत्वों की तुलना भी आधार है।

१—"ज्ञान यह एकही सत्य है, तथा उस ज्ञान में ज्ञातृज्ञेयाहि समस्त प्रपंच कल्पित हैं।"[१] ऐसे जो बौद्धों के मत, (सौगत सिद्धान्त) हैं, उसीको आपने (गौडपादाचार्य ने) स्वीकार किया है, ऐसे शङ्कराचार्य के परमगुरु, जो गौडपादाचार्य थे; उनको उस समय के रहनेवाले पण्डितों के आक्षेप करने पर, उन्होंने निम्न लिखित उत्तर दिया है:—

[२] विज्ञानवादी जो बौद्ध हैं, उनके मतानुसार "ज्ञान को एकही सत्य मानकर, उस ज्ञान में ज्ञातृज्ञेयादि समस्त प्रपंच कल्पित (मिथ्या) हैं। ज्ञान के अतिरिक्त दूसरा कुछभी नहीं है।" ऐसा हमारे अङ्गीकार करने के

---

१ ज्ञानमात्रं परमार्थिकं तत्रैव ज्ञातृज्ञेयादिकल्पितमिति सौगतमतमेव भवताऽपि संगृहीतमिति (आ. गौ. अ. ९९.)

२ यद्यपि बाह्यार्थनिराकरणं ज्ञानमात्रकल्पनाचाद्वयवस्तुसामीप्यमुक्तं, ज्ञानज्ञेयज्ञातृभेदरहितं परमार्थतत्वं अद्वयमेतन्न बुद्धेन भाषितम्।

कारण, हमारे मत से, उनके मत को बहुतांश से ऐक्य आता है, तौभी हमने[३] जिस ज्ञान को स्वीकार किया है, वह ज्ञान नित्य रहकर, सकल भेदरहित, तथा केवल उपनिषदों से ज्ञेय (समझने योग्य) है। बौद्धों का स्वीकृत ज्ञान क्षणिक (अनित्य) है। इसीलिये हमारा स्वीकृत ज्ञान, (ब्रह्म) बौद्धों के ज्ञानसे भिन्न है। इसी कारण से हमारा मत, बौद्धमत से अभिन्न है, ऐसी शङ्का आने को अवकाश कहां होगा।

२—†एक समय शङ्कराचार्य किसी देवालय में भगवान् के दर्शनार्थ जाना चाहते थे। उस समय वहांके ब्राह्मण लोगों ने उन्हें बौद्धमतावलम्बी कहकर देवालय में प्रवेश करने से रोका। शङ्कराचार्य ने "हम बौद्धमतानुयायी नहीं हैं, बौद्धोंने विज्ञानतत्व को क्षणिकत्व माना है, और हम उसे नित्य मानते हैं, ऐसा उत्तर दिया।

३—*स्वप्नावस्था में तथा जागरणावस्था में विज्ञान के अतिरिक्त दूसरी वस्तु का ज्ञान न होने से, विज्ञान के अतिरिक्त दूसरा पदार्थ नहीं है। ऐसा बृहदारण्यक शांकरभाष्य (अ. २ ब्रा. ४ मं. ७) में कहा है।

---

३ इदं तु परमार्थतत्वमद्वैतं वेदांतेष्वेवविज्ञेयमित्यर्थः।

ज्ञानं नैतद्बुद्धेन भाषितं (गौ. का. अ. शां. प्र. ९९.)

सकलभेदविकलं परिपूर्णमनादिनिधनं ज्ञप्तिमात्रमुपनिषदेकसमधिगम्यं तत्वमिह प्रतिपाद्यते। मतांतरे तु नैवमिति कुतो मतसांकर्यशंकावकाशमासादयेत् (आनं.)

† विज्ञानवादस्य च किं विभेदकं भवन्मताद्ब्रूहि ततःपरं व्रज ॥१५-७४॥

विज्ञानवादी क्षणिकत्वमेषामङ्गीचकारेति महान्विशेषः ॥ १५-७५ ॥

(शं. वि.)

* तथाप्रज्ञानव्यतिरेकेण स्वप्नजागरितयोर्न कश्चिद्वस्तुविशेषो गृह्यते। तस्मात् प्रज्ञानव्यतिरेकेणाभावो युक्तस्तेषां (बृ. शां. भा. २।४।७.)

४—¶ आत्मा के अतिरिक्त (ज्ञान के अतिरिक्त) दूसरी वस्तु का ज्ञान न होने से सब आत्मा ही (ज्ञान ही) है। आत्मा (ज्ञान) के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। बृह. शां. भा. अ. २ ब्रा. ४ मं. ६.

५—§ 'तदनन्यत्वमारंभणशब्दादिभ्यः' (ब्र. सू. २।१।१४) इत्यादि सूत्रों के भाष्य में, जगत् का कारण जो ब्रह्म (ज्ञान) है, उसके अतिरिक्त दूसरा कार्य जगत् नहीं। समस्त जगत् विज्ञान में (ब्रह्म में) कल्पित (मिथ्या) है।

अद्वैत वादियों के इत्यादि कहने से, "ज्ञान एक सत्य है, उस ज्ञान में ज्ञातृ ज्ञेयादि समस्त प्रपंच कल्पित है। विज्ञान के अतिरिक्त दूसरा कुछ नहीं है" ऐसा जो बौद्धमत है वही अद्वैत मत है। ऐसा सिद्ध होता है।

॥ इसके ऊपर अद्वैतवादियों के आक्षेप ॥

"बौद्धों के लिये विज्ञान एकही तत्व है। उस विज्ञान में समस्त जगत् कल्पित ("मिथ्या" तीनकालों में भी न रहनेवाला) ऐसा हमलोगों के अङ्गीकार करने के कारण दोनों विषयों में हमारा (अद्वैत वादियों का) तथा बौद्धों का मत एक होनेपर भी, हम विज्ञान तत्व को नित्य मानते हैं, और बौद्ध अनित्य (क्षणिक) मानते हैं। हमारा विज्ञानरूपी ब्रह्म उपनिषदों से (ज्ञेय) समझने योग्य है। बौद्धों का विज्ञान तत्व उपनिषदों से ज्ञेय नहीं है। इसी कारणसे इन विषयों में भेद होनेसे हमारा अद्वैत मत, तथा बौद्धमत एक कैसे होगा?"

¶ आत्मव्यतिरेकेणाग्रहणादात्मैव सर्वं (बृ. शां. भा. २।४।५.)

§ कारणं परंब्रह्म तस्मात्कारणात्.......व्यतिरेकेणाभावः कार्यस्याव गम्यते (ब्र० सू० शां० भा० २।१।४।) [२-१-१४।

ब्रह्मव्यतिरेकेण कार्यजातस्याभाव इति गम्यते (ब्र० सू० शां० भा०)

॥ इस आक्षेप का समाधान ॥

१—बौद्ध भी विज्ञान तत्व को नित्य मानते हैं, ऐसा §अद्वैत ग्रंथकारोंने, तथा अन्य अनेक ग्रंथकारोंने भी, अपने अपने ग्रंथों में कहा है। अतः नित्य विज्ञानवादी बौद्धों के मत का, नित्य विज्ञान (ब्रह्म) वादी अद्वैत मत से कुछ भी भेद नहीं है।

२—* अद्वैतवादियों का ब्रह्म समस्त धर्मों से रहित हैं, उस ब्रह्म में (ज्ञान में) भेद नहीं है, तथा भेदक याने भेदको समझा देनेवाला धर्म भी नहीं है। ऐसा अंगीकार करते हैं उससे बौद्धों के विज्ञानतत्वसे अद्वैत ब्रह्म (विज्ञानतत्व) भिन्न है ऐसा कथन विरुद्ध होता है।

बौद्धों का विज्ञान तत्व उपनिषदोंसे ज्ञेय नहीं हैं अद्वैतियों का विज्ञानतत्व (ब्रह्म) उपनिषदोंसे ज्ञेय है इसकारण से अद्वैतियों के विज्ञान तत्व का तथा बौद्धों के विज्ञानतत्व का भेद है ऐसा कहना भी योग्य नहीं है। कारण उपनिषदों से ज्ञान होने का जो कारणीभूत धर्म है उसको अद्वैतवादी, ब्रह्म में नहीं मानते हैं। इसलिये अद्वैतियों का ब्रह्म उपनिषदों से ज्ञेय नहीं होता है, और अद्वैतीलोग अपने ब्रह्मको अज्ञेय। (कोई प्रमाण से भी न समझा जानेवाला) ऐसा भी कहते हैं उससे अद्वैतियों का ब्रह्म उपनिषदों से ज्ञेय नहीं है, दोनों तत्व भी अज्ञेय होनेके कारण बौद्धोंका

---

§सर्वप्रकारेण यथार्थं वैनाशिकसमयः उपपत्तिमत्वाय परीक्ष्यते शां. भा.

अर्थश्च नैरात्म्यमभ्युपेत्य आलयविज्ञानं समस्तवासनाधारं अभ्युपगछन् अक्षरमात्मानमभ्युपैति.

एवं क्षणिकत्वमभ्युपेत्य उत्पादाद्वा तथागतानामनुत्पादाद्वा स्थितैवैषा धर्माणांधर्मता धर्मस्थितिता इति नित्यतामुपैतीत्यादिबहुनेतव्यं. भामति

अक्षरंअविनाशिनं अनादिवासनानां आधारत्वात् अविनाशित्वसिद्धिः (वेदांतक)

* यस्मिन्‌नकश्चिद्विशेषोऽस्ति नामवा. रूपंवा. कर्मवा भेदोवा. जातिर्वा गुणोवा तद्वारेणहिशब्दप्रवृत्तिर्भवति नचैषां कश्चिद्विशेषो ब्रह्मण्यस्तिअतोननिर्देष्टुं-शक्यते इदंतदिति। [बृ० शां० भा० २।३।६]

विज्ञानतत्व तथा अद्वैतियोंका ब्रह्मतत्व (विज्ञानतत्व) इनदोनों में परस्पर भेद नहीं है।

३ - विज्ञानतत्व एक सत्य है, और समस्त जगत मिथ्या (झूठा) है। इन मुख्य दो विषयों में अवैदिक बुद्धमतको अद्वैत मतसे साद्दश्य होनेपर, 'विज्ञानतत्व नित्य हैं' केवल इतनाही बौद्धमत से विशेष रहने के कारण, अद्वैतवाद वैदिक किस प्रकार होगा? क्योंकि वेद, ब्रह्मसूत्र, गीता रूपी प्रस्थानत्रयों में, 'जग झूठा है, विज्ञान एकही तत्व है और वह नित्य है,' ऐसा नहीं कहा है।

४-अद्वैतवादियों का विज्ञानतत्व नित्य है, तथा बौद्धों का विज्ञानतत्व अनित्य है; ऐसा होनेपर भी दोनों मतों में (सिद्धान्तों में) ब्राह्मणादि वर्ण, ब्रह्मचर्यादिआश्रम, स्नान, संध्या, यज्ञ, इन्द्रादिदेव, वेद, गङ्गादि तीर्थ, परलोक, इत्यादि समस्त जगत मिथ्या (झूठा) है, ऐसा अंगीकार करने के कारण, आस्तीकलोगों के कर्माचरणका अनुकरण अद्वैत वादियों को योग्य कैसे होगा? बौद्धमतके अनुसार वेदाध्ययन, यज्ञादि वैदिक कर्म न करनाही उनके योग्य हैं।

'अस्ति परलोक इत्येवं मतिः यस्यसः आस्तिकः' 'परलोक है' ऐसा बुद्धि जिसको है वह 'आस्तीक' ऐसा कहा जाता है। 'परलोक नहीं है' ऐसा बुद्धि जिसका है, वह नास्तीक कहाता है। परलोक नहीं है तथा यह लोक भी नहीं है। ऐसा कहनेवाले अद्वैतीलोग आस्तीक कैसे होंगे?

॥ सारांश ॥

बौद्धों का विज्ञानवाद—विज्ञान एक सत्य है. उस विज्ञानसे समस्त प्रपंच आरोपित (कल्पित मिथ्या) है.

शङ्कराचार्य का विज्ञानवाद (ब्रह्मवाद)-विज्ञान (ब्रह्म) एक सत्य है. उस विज्ञान मे समस्त प्रपंच आरोपित हैं.

इस प्रकार दोनो मतों मे जगत् कल्पित है तथा उस जगत् का भ्रमाधिष्ठान विज्ञान तत्व है ऐसा मानने के कारण दोनो मतोमें कुछ भी भेद नहीं है यह स्पष्ट होता है।

प्रकरण तीसरा।

बौद्धों का शून्यवाद तथा अद्वैतियों का ब्रह्मवाद एक ही है।

इस विषय में पीछे कहे हुए, केवल पुराणवाक्य ही आधार न रहकर, अद्वैतियों के वाक्य तथा तत्वों की तुलना भी आधार है।

बौद्धों का शून्यवाद—

१—शून्य एक सत्य है, उस शून्य में समस्त प्रपंच आरोपित (कल्पित-मिथ्या) है।

शांकराचार्य का अद्वैतवाद—

२—ब्रह्म एक सत्य है, उसमें समस्त प्रपंच कल्पित (मिथ्या) है।

इसप्रकार दोनों मतों में जगत् कल्पित (मिथ्या) है ऐसा स्वीकार करने से, इस विषय में दोनों मतों में भेद नहीं, यह स्पष्ट ही होता है।

अब जगत के भ्रमाधिष्ठान को बौद्ध 'शून्य' ऐसा कहते हैं, तथा अद्वैतिलोग 'ब्रह्म' ऐसा कहते हैं तो बौद्धों का शून्य, तथा अद्वैतियों का ब्रह्म, इनदोनों में परस्पर भेद है या नहीं इसका विचार करेंगे।

§ "बौद्धाभिमत शून्य यदि भावरूप हो, तो वह शून्य हमारा (अद्वैतियों का) ब्रह्म ही हुआ। इसी कारण शून्यवाद, ब्रह्मवाद ही होता है" ऐसा "क्षणिकत्वाच्च" (ब्रह्मसूत्र २। २। ३१) इस सूत्र के शांकरभाष्य की 'ब्रह्मविद्याभरण' नामक टीका में लिखा है।

इससे, शून्य, भाव रूप है' इस पक्ष को बौद्धोंने स्वीकार करने से, बौद्धों का शून्य, तथा अद्वैतियों का ब्रह्म एक ही हुआ।

---

§शून्यपदेन सर्वप्रपंचातीतं भावरूपंकिंचित्तत्वंविवक्षितं उताभावरूपं नाद्यः तथासति वाचोयुक्त्यंतरेण ब्रह्मवाद एवाश्रितः ।

बौद्धों ने, 'शून्य अभाव रूप है,' (प्रपंचाभावरूप है) ऐसा स्वीकार किया, तो *अद्वैतियों ने भी ब्रह्म, प्रपंचाभावरूप है ऐसा स्वीकार करने के कारण, बौद्धोंका प्रपंचाभावरूप शून्य, तथा अद्वैतियोंका प्रपंचाभावरूप ब्रह्म, एक ही होता है।

बौद्ध, जिस प्रकार, शून्य में भावरूपता तथा अभावरूपता, दोनो धर्म झूठे हैं ऐसा मानते हैं। उसी प्रकार अद्वैतवादी भी अपने ब्रह्म में, भावरूपता तथा अभावरूपता, दोनों धर्म झूठे हैं, ऐसा कथन करते हैं। इससे, अद्वैतियोंका ब्रह्म, सच्चा भावरूप नहीं है तथा सच्चा अभावरूप भी नहीं है। उसी प्रकार बौद्धों का शून्य भी, सच्चा भावरूप नहीं है तथा सच्चा अभावरूप भी नहीं है। इसी कारण, शून्य तथा ब्रह्म, इन दोनोंमें से एक को झूठा भावरूपत्व, तथा दूसरे को झूठा अभावरूपत्व स्वीकार किया तोभी, शून्य तथा ब्रह्म इनदोनों में भेद नहीं प्राप्त हो सक्ता है।

बौद्ध, जिस प्रकार शून्य को समस्त भेद से रहित तथा समस्त धर्म से रहित स्वीकार करते हैं। उसी प्रकार अद्वैतवादी भी अपने ब्रह्मको समस्त भेद से रहित तथा समस्त धर्म से रहित स्वीकार करते हैं, इसी से शून्य तथा ब्रह्म इनदोनों में किसी प्रकार से भी भेद प्राप्त नहीं हो सक्ता।

इस प्रकार जगत के भ्रमाधिष्ठान को अद्वैतवादी चाहे 'ब्रह्म' ऐसा कहे, तथा शून्यवादी 'शून्य' ऐसा नाम रक्खें, परंतु दोनों पदार्थ एक ही है, इस विषय में अब वाद नहीं रहा है।

॥ सारांश ॥

शून्य भावरूप तत्व है, या अभावरूप तत्व है, इसप्रकार अद्वैतियों ने बौद्धों को पूंछेहुए दोनों विकल्पो में से, बौद्धोंने कोई भी पक्ष का स्वीकार किया, तोभी अद्वैत ब्रह्म, शून्य ही होगा। इस से शून्यवादी बौद्धमत तथा अद्वैतमत एकही होता है।

---

*प्रपंच निषेधाधिकरणीभूत ब्रह्माभिन्नत्वात् निषेधस्य तात्विकत्वेपि नाद्वैतहानिः। (अ. सि. परि. १)

प्रकरण चौथा.



योग्यान् योजयितुं धिया विमलया ।
नाभाव इत्यादिभिः ॥
सूत्रैः खंडितमाह बौद्धदलन ।
व्याजेन तच्छंकरः ॥

शङ्कराचार्यने योग्य दैवीसंपत्तिमान् लोगोंको, 'अद्वैतमत प्रमाणों से विरूद्ध है' ऐसा ज्ञान उत्पन्न होनेके लिये, बौद्धों के विज्ञानवाद का खंडन करने का निमित्त आगे कर, अपने ही मत का खंडन निम्नलिखित पद्धती से किया है ।

विज्ञानवादी बौद्धों का मतः—

विज्ञान एक ही सच्चा है, विज्ञान से अतिरिक्त बाह्य जगत्, उस विज्ञान में कल्पित है ।

शङ्कराचार्य का मतः —

विज्ञान एक ही सच्चा है, विज्ञान से अतिरिक्त बाह्य जगत्, उस विज्ञान में कल्पित है ।

इस प्रकार अपने मतो में 'जगत् कल्पित है' याने तीनों कालों में भी न रहनेवाला है, ऐसा स्वीकार करने पर भी, 'नाभावउपलब्धेः' इत्यादि सूत्रों का व्याख्यान करते हुए, शङ्कराचार्य ने 'बाह्य जगत् नहीं है' इस मत का खंडन आगे कहे प्रकार अपने भाष्य में किया है ।

'विज्ञान से अतिरिक्त बाह्य जगत् नहीं है' ऐसा विज्ञानवादी बौद्ध के, कहने पर, उसके £ तीन विकल्प कर प्रत्येक विकल्प का खंडन किया है ।

£ नखलवभावो बाह्यार्थस्याध्यवसातुं शक्यते । सह्युपलंभाभावाद्वाध्यवसीयते सत्यप्युपलंभे तस्य बाह्याविषयत्वाद्वा सत्यपि बाह्यविषयत्वे बाह्यार्थ बाधकप्रमाणसद्भावाद्वा (ब्र० सू० शां० भा० भामती । २ । २ । २८)

॥ वह तीन विकल्प ॥

१ - प्रपंच की उपलब्धि ही नहीं इसलिये ज्ञानातिरिक्त प्रपंच नहीं मानते हो ?

२ - प्रपंच की उपलब्धि होने परभी, 'प्रपंच ज्ञानातिरिक्त है' ऐसी उपलब्धि नहीं है। इसलिये "प्रपंच ज्ञानातिरिक्त है" ऐसा नहीं मानते हो ?

३ — 'पदार्थ ज्ञानसे अतिरिक्त है' ऐसा स्वप्नमें प्रतीत हुआ तोभी, जिस प्रकार स्वप्नकालीन पदार्थ ज्ञान से अतिरिक्त ऐसा स्वीकार करते नहीं हैं, उसी प्रकार जागरणावस्था में प्रपंच ज्ञान से अतिरिक्त है ऐसा प्रतीत होनेपर भी ज्ञान से अतिरिक्त स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है ऐसा मानते हो ?

॥ प्रथम प्रश्न का खंडन ॥

"प्रपंच की उपलब्धि ही होती नहीं है इस कारण ज्ञान से अतिरिक्त प्रपंच को नहीं मानते" यह कथन अयुक्त है। कारण,

नाभावउपलब्धेः (ब्र० सू० २। २। २८)

सूत्रार्थ — § "उपलब्धेः" घट, पट, स्तंभ, इत्यादि पदार्थों की उपलब्धि होनेसे, प्रपंच का 'अभावः' याने अभाव 'न' नहीं स्वीकारना चाहिये।

सूत्र का तात्पर्य — घट, पट, स्तंभ, इत्यादि पदार्थों की उपलब्धि होने पर भी, वह नहीं होती ऐसा कहना युक्त नहीं। जैसे कोई एक मनुष्य आप स्वयं भोजन कर के, भोजन से प्राप्त होनेवाली जो तृप्ति उसका अनुभव करते समय, 'हमने भोजन किया नहीं,' 'हमको तृप्ति भी हुआ नहीं'

---

§ (नाभाव उपलब्धेः २। २। २८) नखल्वभावो बाह्यार्थस्याध्यवसातुं शक्यते। कस्मात् उपलब्धेः उपलभ्यते हि प्रतिप्रत्ययं बाह्योर्थःस्तंभः कुड्यं घटः पट इति। नचोपलभ्यमानस्यैवाऽभावो भवितुमर्हति। यथा हि कश्चि-द्भुंजानो भुजिसाध्यायां तृप्तौ स्वयमनुभूयमानायामेवं ब्रूयान्नाहं भुञ्जे न वा तृप्यामीति तद्वदिंद्रियसन्निकर्षेण स्वयमुपलभमान एव बाह्यमर्थं नाहमुपलभे न च सोऽस्तीति ब्रुवनकथमुपादेयवचनः स्यात् (शां० भा०)

ऐसा कथन करनेवाले के वाक्य जिस प्रकार ग्राह्य नहीं होते हैं, उसी प्रकार इन्द्रिय संनिकर्ष से, आप स्वयं देखते हुए भी बाह्य पदार्थ हम नहीं देखते हैं, बाह्यपदार्थ नहीं है, ऐसा कथन करनेवाले के वाक्य भी अंगीकार करने के योग्य नहीं है।

इस प्रकार "प्रपंच की उपलब्धि ही नहीं इसलिये ज्ञानातिरिक्त पदार्थ नहीं मानते" इस प्रथम पक्ष का खंडन किया है।

॥ दूसरे पक्ष का खंडन ॥

*"पदार्थ हम नहीं देखते हैं" ऐसा हमारा कथन नहीं है, किन्तु 'ज्ञान से अतिरिक्त पदार्थ है' ऐसा नहीं देखते हैं इसलिये ज्ञानातिरिक्त पदार्थ हम नहीं मानते ऐसे बौद्ध के कहने पर शङ्कराचार्य उत्तर देते हैं:—

ठीक है तुम्हारा मुख तो किसीने बंद किया नहीं है, चाहे जो कहो, परन्तु यह तुम्हारा कहना युक्ति सिद्ध नहीं है। क्योंकि पदार्थ ज्ञानरूप है ऐसा कोईभी देखता नहीं है। घट, पट, इत्यादि पदार्थ ज्ञान विषय ही है, याने ज्ञान से समझे जानेवाले ही हैं। ज्ञान से समझे जानेवाला पदार्थ ज्ञानरूप नहीं होसक्ता है। इसीकारण, याने पदार्थ, ज्ञानसे समझा जानेवाला होने के कारण इसी उपलब्धि के जोर से, पदार्थ ज्ञानसे भिन्न है ऐसाही स्वीकार करना भाग है, इत्यादि अनेक दोष कह कर शङ्कराचार्य ने 'ज्ञान से अतिरिक्त पदार्थ नहीं' इस दूसरे पक्ष का खंडन किया है।

॥ तीसरे पक्ष का खंडन ॥

†स्वप्नावस्था में, स्वाप्न पदार्थ ज्ञान से अतिरिक्त है, ऐसा दृष्टिगोचर

---

* नाहमेवं ब्रवीमि न कंचिदर्थमुपलभ इति। किंतु उपलब्धिव्यतिरिक्तं नोपलभ इति ब्रवीमि। बाढमेवं ब्रवीषि निरंकुशत्वात्ते तुण्डस्य न तु युक्त्युपेतं ब्रवीषि। यतउपलब्धिव्यतिरेकोऽपि बलादर्थस्याभ्युपगंतव्यः। उपलब्धेरेव। न हि कश्चिदुपलब्धिमेव स्तंभः कुड्यंचेत्युपलभते उपलब्धिविषयत्वेनैवतु स्तंभकुड्यादीन् सर्वेलौकिकाः उपलभन्ते (ब्र० सू० शां० भा० २।२।२८.)

† यदुक्तं बाह्यार्थापलापिना स्वप्नादिप्रत्ययवज्जागरितगोचरा अपि

होनेपर भी, जिसप्रकार स्वाप्नपदार्थ ज्ञान से अतिरिक्त है ऐसा स्वीकार नहीं करते हैं; उसी प्रकार जागरणावस्था में पदार्थ ज्ञानसे अतिरिक्त है ऐसा दिखनेपर भी, पदार्थ ज्ञान से अतिरिक्त मानने का कारण नहीं है। इस पक्ष का खंडन

॥ वैधर्म्याच्चन स्वप्नादिवत् ॥

इस सूत्र से किया है.

सूत्र का तात्पर्य - स्वप्नावस्था में, 'स्वाप्न पदार्थ ज्ञान से अतिरिक्त है' ऐसा जो ज्ञान होता है उस ज्ञान को जागरणा अवस्था में बाध, याने 'स्वाप्न पदार्थ नहीं हैं ऐसा ज्ञान' होने के कारण स्वप्नावस्था के पदार्थ ज्ञान से अतिरिक्त नहीं मानते हैं, तोभी जागरणावस्था में, 'प्रपंच ज्ञानसे अतिरिक्त है' ऐसा जो ज्ञान होता है, उस ज्ञान को कोई भी अवस्था में बाध, याने 'प्रपंच ज्ञान से अतिरिक्त नहीं है ऐसा ज्ञान' न होनेके कारण, 'प्रपंच, ज्ञान से अतिरिक्त है' एसे अबाधित अनुभव के बल से प्रपंच को ज्ञान से अतिरिक्त मानना चाहिये। इत्यादि दोष कथन कर, 'ज्ञानातिरिक्त पदार्थ ही नहीं है' ऐसा जो बौद्धों का तृतीय पक्ष, उसका खंडन किया है।

'ज्ञान से अतिरिक्त प्रपंच नहीं' ऐसा जो बौद्धमत उसका अद्वैतियों ने खंडन करने के कारण, 'ज्ञान से अतिरिक्त प्रपंच नहीं' ऐसे अपने मत का भी खंडन आप स्वयं कर डाला है।



स्तंभादिप्रत्ययाः विनैव बाह्येनार्थेन भवेयुः प्रत्ययत्वाविशेषादिति। तत्प्रतिवक्तव्यम्। अत्रोच्यते न स्वप्नादि दिप्रत्ययवज्जाग्रत्प्रत्यया भवितुमर्हन्ति कस्मात् वैधर्म्यात् वैधर्म्यंहि भवति स्वप्न जागिरतयोः किंपुनर्वैधर्म्यं बाधाबाधाविति ब्रूमः बाध्यते हि स्वप्नोपलब्धं वस्तु प्रतिबुद्धस्य.......................... नैवंजागरितोपलब्धं वस्तु स्तंभादिकं कस्यांचिदप्यवस्थां बाध्यते (ब्र० सू० भा० २। २। ४.)

जिस प्रकार शङ्कराचार्य ने विज्ञानवादि बौद्धों के मत का खंडन कर, स्वयं अपने अद्वैत मत का भी खंडन करडाला है, उसी प्रकार बौद्धों के शून्यवाद का आगे कहे अनुसार खंडन कर, अपने अद्वैत मत का भी खंडन कर लिया है।

‡ "शून्यपद से भावरूप वस्तु ग्रहण करते हो? या प्रपंचाभाव रूप ग्रहण करते हो? ऐसा विकल्प, अद्वैतवादियों ने बौद्धों को करके, शून्यपद से यदि भावरूप वस्तु ग्रहण की जाय तो हमारा अद्वैतियों का ब्रह्म ही होता है। याने बौद्धोंने दूसरे शब्द से (शून्यवाद शब्द से) ब्रह्मवाद का ही आश्रय किया है" ऐसा बौद्धोंने शून्य को भावरूपता स्वीकार करने पर उनके मत से अपने अद्वैत मत को ऐक्य, अद्वैतियों ने स्वीकार करके बौद्धोने "शून्य अभावरूप (प्रपंचाभावरूप) है" ऐसा स्वीकार करने से, समस्त प्रमाणों से विरोध आता है, समस्त प्रमाणों से 'प्रपंच है' ऐसी उपलब्धि हुआ तोभी प्रपंच का अभाव, तत्व (सत्य) है, ऐसा निरूपण करना अशक्य है। इस प्रकार दूषण स्पष्ट होने के कारण, इस अतिहेय मत का निराकरण करने के लिये सूत्रकार वेदव्यास ने सूत्र निर्माण नहीं किया है। ऐसा शङ्कराचार्य, भामतीकार, ब्रह्मविद्याभरणकार इत्यादि अद्वैतियों ने ही "प्रपंच, समस्त प्रमाणों से है ऐसा समझने पर भी प्रपंच का अभाव कहना योग्य नहीं है" ऐसा खंडन किया है।

अद्वैती लोग भी प्रपंच को मिथ्या याने तीनकालों में भी न रहने

---

‡ शून्यवादिपक्षस्तु सर्वप्रमाणविप्रतिषिद्ध इति तन्निराकरणाय नादरः क्रियते (शा० भा०)

शून्यपदेन सर्वप्रपञ्चातीतं भावरूपं किंचित्तत्वं विवक्षितं उत भावरूपं नाद्यः - तथासति वाचोयुक्त्यंतरेण ब्रह्मवादएवाश्रितः। यदि-द्वितीयःपक्षः - तदा सर्वप्रमाणविरोधः। सर्वप्रमाणैः प्रपञ्च उपलभ्यमाने तदभाव एव तत्वमिति निरूपयितुमशक्यमिति दूषणस्य स्फुटतया तन्निराकरणाय न सूत्रकृता सूत्राण्यारचितानि. (ब्रह्मविद्याभरणे २-२-३९.)

वाला, ऐसा प्रपंच का अभाव स्वीकार करते हैं और वह प्रपंच का अभाव ※ब्रह्मरूप है, ऐसा शून्यवादियों के समान स्वीकार करने के कारण प्रपंच का अभाव है तथा वह भी ब्रह्म रूप है ऐसे कहनेवाले अद्वैतमत को भी समस्त प्रमाणों से विरोध आता है, इस कारण यह अद्वैत मत भी अत्यन्त हेय होने से, निराकरण करने को भी योग्य नहीं फिर स्वीकार करना तो दूर ही रहा। ऐसा अपने अद्वैतमत का भी खंडन आप स्वयं ही करलिया है।

॥ इसके ऊपर अद्वैतवादियों का आक्षेप ॥

समस्त प्रमाणों से 'प्रपंच है' ऐसा सिद्ध हुआ तो भी प्रपंच नहीं है ऐसा कहनेवाले बौद्धों पर समस्त प्रमाणों से विरोध आता है। ऐसा जो दूषण बौद्धों को हमने कहा है, वह दूषण, प्रपंच नहीं है ऐसा हम स्वीकार करे तो भी हमको नहीं आता है। क्योंकि हमने ब्रह्म, (ज्ञान) पारमार्थिक सत है, प्रपंच (जगत्) व्यावहारिक सत् है, ऐसा दो सत् पदार्थ माने हैं। प्रत्यक्षादिप्रमाण 'जगत् व्यावहारिक सत है' ऐसा समझा देते हैं जगत् पारमार्थिक सत् है ऐसा नहीं समझा देते, हमलोग जगत् नहीं है ऐसा जो कहते हैं वह पारमार्थिक सत् नहीं है, इस अभिप्राय से कहते हैं। प्रत्यक्षादिप्रमाण यदि, 'जगत् पारमार्थिक सत है' ऐसा समझादे, और हम 'जगत् पारमार्थिक सत् नहीं है' ऐसा कहे तो, हमको प्रत्यक्षादि प्रमाणों से विरोध प्राप्त होगा। हमलोग तो प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे सिद्ध होनेवाली जगत् की व्यावहारिक सत्ता स्वीकार करते हैं, इससे हमारे मत को प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे विरोध प्राप्त नहीं होता है।

॥ सारांश ॥

(प्रत्यक्षादि प्रमाण 'जगत् व्यावहारिक सत है' ऐसा समझा देते हैं, हम 'जगत् पारमार्थिक सत् नहीं है' ऐसा निषेध करते हैं इससे विधि निषेधों को भिन्न विषय होने के कारण प्रत्यक्षादि प्रमाणों से विरोध नहीं आता है)

※ प्रपञ्चनिषेधाधिकरणीभूत ब्रह्माभिन्नत्वान्निषेधस्य तात्विकत्वेपि नाद्वैतहानिः (अ० सि० परि० १ द्वितीयमिथ्यात्वोपपत्तौ ९६)

॥ आक्षेप का समाधान ॥

१—बौद्धों का तत्व, अथवा अद्वैतियों का तत्व।	जगत् कल्पित है। जगत् की सत्ता नहीं हैं।
२—अद्वैतियों ने, बौद्ध मतका किया-हुआ खंडन, अथवा द्वैतवादियों ने अद्वैतमत का किया हुआ खंडन।	'जगत है' ऐसा प्रमाणों से सिद्ध होता है, इसलिये 'जगत् नहीं है' ऐसा, तुम्हारा (बौद्धों का अथवा अद्वैतियों का) कथन प्रमाणों से

विरुद्ध होता है, इसलिये जगत की सत्ता माननी चाहिये।

३—बौद्धों का अद्वैतवादियों पर आक्षेप, अथवा अद्वैतवादियों का द्वैतवादियों पर आक्षेप।	व्यावहारिक सत तथा पारमार्थिक सत् ऐसा दो सत् पदार्थ हैं प्रमाण, 'जगत् व्यावहारिक सत है'

ऐसा समझा देते हैं। हम, 'जगत् पारमार्थिक सत नहीं है' ऐसा पारमार्थिक सत्ता का निषेध करते हैं। प्रमाणों से सिद्ध व्यावहारिक सत्ता का निषेध नहीं करते हैं, ऐसे विधि निषेधों को भिन्न विषय होने के कारण प्रमाणों से विरोध, हमारे (बौद्धों के अथवा अद्वैतियों के) मत को नहीं आता है।

४—बौद्धों के आक्षेप को अद्वैतियों का समाधान अथवा अद्वैतियों के आक्षेप को द्वैतवादियों से समाधान।	समस्त प्रमाण, आप आपने विषय, (प्रमाणों से समझा जानेवाला पदार्थ) 'पारमार्थिक सत् (तत्व) है' ऐसाही समझा देते हैं, वे 'पदार्थ,

व्यावहारिक सत् है पारमार्थिक सत नहीं है' ऐसा नहीं समझा देते हैं, परंतु उन प्रमाणों को यदि बाधज्ञान आवे, तो वह अप्रमाण होकर, उनसे समझने वाले विषय भी अतत्व याने पारमार्थिक नहीं, ऐसे सिद्ध होवेंगे।

उदाहरण:—

सितुहा को देखकर, 'इदंरजतं' 'यह चांदी है' ऐसा जो ज्ञान, वह अपने विषय को, (रजत को) 'पारमार्थिक सत है, ऐसा समझा देता है;

तथापि 'नेदंरजतं किंतु शुक्ति रेव' याने 'यह चांदी नहीं किंतु सिंपुहा ही है' ऐसा बाधज्ञान होने से, 'इदंरजतं' यह जो ज्ञान, वह अप्रमाण होकर, विषयी भूत जो चांदी वह भी, पारमार्थिक सत् नहीं है, झूठी है, ऐसा सिद्ध होता है। इत्यादि

प्रकृत में, 'जगत् पारमार्थिक सत है' ऐसा जो ज्ञान, उसको, 'जगत् पारमार्थिक सत् नहीं' ऐसा बाधक ज्ञान, ‖कोई भी अवस्था में नहीं है, इसलिये, प्रमाणों से सिद्ध हुई, ऐसी जो जगत् की पारमार्थिक सत्ता, वह नहीं है, ऐसा उसका निषेध करने का कोई भी आधार नहीं है। इसलिये 'जगत् पारमार्थिक सत है' ऐसाही प्रमाणों से सिद्ध होता है। तुम 'जगत् पारमार्थिक सत नहीं' ऐसा निषेध करते हो, इसलिये विधि निषेधों को एकही विषय होने के कारण, 'जगत् पारमार्थिक सत नहीं' ऐसा स्वीकार करनेवाले तुम्हारे बौद्धवादियों के अथवा अद्वैतवादियों के मत को प्रमाण विरोध कैसे छूटेगा ?

१—बौद्धों का तत्व, तथा अद्वैतियों का तत्व।

२—बौद्धों का खण्डन, तथा अद्वैतियों का खण्डन।

३—बौद्धों का अद्वैतवादियों पर आक्षेप, तथा अद्वैतवादियों का द्वैतवादियों पर आक्षेप।

४-बौद्धों के आक्षेप को अद्वैतियों का समाधान, तथा अद्वैतवादियों के आक्षेप को द्वैतवादियों का समाधान।

यह चारो उपरोक्त प्रकार एक होने से, अद्वैतियों ने बौद्धों के आक्षेप का आप स्वयं किया हुआ जो समाधान, उसको मनमें लाकर हमारे ऊपर किये हुए आक्षेप को वापस लेना, यही सूत्रों का काम है।

(सारांश) बौद्धों के आक्षेप का जो समाधान आपने किया है, वही समाधान, हमारे ऊपर किये हुए आक्षेप को रहते हुए भी, ऐसा आक्षेप करना पण्डितों का काम नहीं है।

‖ नैवंजागरितोपलब्धं वस्तु स्तंभादिकं कस्यांचिदप्यवस्थायां बाध्यते (ब्र. सू. शां. भाष्य)।

प्रकरण पाचवां।

पाश्चिमात्य युरोपियन पंडित वुर्कहार्ट प्रभृत्ति अंग्रेजों ने, तथा हिन्दुस्तान के आंग्ल विद्या पारंगत एस्० दास गुप्त, सर राधाकृष्ण प्रभृति अद्वैतियों ने भी, "अद्वैत मत तथा बौद्धमत एकही है। बौद्धमत को ही वैदिक का वेष देकर, उसको अद्वैतमत ऐसा कहते हैं। बौद्धमत तथा अपना मत एक होने पर भी, शङ्कराचार्य बौद्धमत का खंडन करते हैं। इसके बारेमें हम क्या कहें! (खण्डन करना योग्य नहीं) शङ्कराचार्य के वाक्य, तत्व जिज्ञासु लोगों के वाक्य नहीं है, उन्मत्त लोगों के वाक्य के समान है" ऐसा लिखा है, इससे भी अद्वैतमत अवैदिक बौद्ध-मत ही है, (शङ्कराचार्य ने) अपने मत का खण्डन, आप स्वयं कर लिया है, ऐसा सिद्ध होता है।

I.

Thus it does not seem so passing strange that there should be striking similarities between Buddhism and Sankara seeing that the sources of their thought lie so near together......But in view of all this what are we to say of the vehement opposition to Buddhism which we find in Sankara's own writings and particularly in the second section of the second chapter of his commentary on the Vedante Sutras?..... His language is that of the fullblooded controversialist rather than of the abstractly intellectual reasoner.

W. S. URQUHART, M.A., D. LITT.

इस प्रकार बौद्धमत से, शङ्करमत को स्पष्ट सादृश्य रहना, कोई आश्चर्य की बात नहीं है। दोनों का उत्पत्ति स्थान बहुत समीप है, ऐसा

होनेपर भी, शङ्कराचार्य अपने ग्रंथ में, विशेषतः ब्रह्मसूत्रों के द्वितीयाध्याय के द्वितीयपाद में, बौद्धमत का बड़ेजोर से खण्डन करते हैं। इस विषय में हम क्या कहें! (यह खण्डन करना बराबर नहीं) शङ्कराचार्य के वाक्य उन्मत्तलोगों के वाक्य के सदृश है, परन्तु तत्वजिज्ञासुओं के वाक्य के समान नहीं है।

W. S बुर्क हार्ट, M. A., D LITT.

II.

He (Sankara) has, I think, tried his level best * to *explain away* even the most obvious references to Buddha and Buddhism in Gaudapada's Karika.

S. DAS GUPTA, M A., PH, D.

बौद्धों को तथा बुद्ध के मत को, गौडपादकारिका में स्पष्ट रहनेवाले विषय में भी, शङ्कराचार्य ने समाधान कहने सरीखा जितना शक्य था, उतना कहा है ऐसा हम समझते हैं।

S. दास गुप्त, M. A.

III.

That Gaudapada gives us a Vedantic adaptation of the Buddhist Sunyavada is supported by many scholars, such as Jacobi, Poussin, Sukhtankar and Vidhusekhara Bhattacharya. Unfortunately Sankara *explains away* all obvious references to Buddhism.

Sir S. RADHAKRISHNAN, M A., D LITT.

बौद्धों के शून्यवाद को ही, गौडपाद ने वेदांत ऐसा नाम रक्खा है इसको जाकोबि, पौस्सिन, सुखटंकर, विधुशेखरभट्टाचार्य, प्रभृत्ति पंडितोंने अनुमोदन दिया है। दुरदृष्ट से बौद्धमत के तत्वों पर शङ्कराचार्यने समाधान करने सरीखा कुछ तो भी कहा है।

सर ऐस्० राधाकृष्ण, M A., D. LITT.

॥ उपसंहार ॥

इस प्रकार अद्वैतमत, अवैदिक बौद्धमत है, ऐसा सिद्ध होने से अवैदिक है, इतनाही नहीं किंतु "परब्रह्म सकल धर्मों से रहित, (निर्गुण तथा निष्क्रिय इत्यादि) है। ब्राह्मणादिवर्ण झूठे हैं, ब्रह्मचर्यादि आश्रम झूठे हैं। यज्ञ, वेद, देवता, गङ्गादितीर्थ सब झूठे हैं, स्वर्गादि परलोक तथा यह लोक, इतनाही क्या समस्त जगत् झूठा हैं मैं ब्रह्म हूं" इत्यादि, अद्वैत मत में जो तत्व कहे हैं, वे समस्त तत्व, † प्रसिद्ध वेद, वेदों के अर्थ को निर्णय करने के लिये बनाये हुए ब्रह्मसूत्र, भगवद्गीता, इन प्रस्थानत्रयो में कहे हुए § नहीं हैं। इससे भी अद्वैतमत अवैदिक है, इसलिये इस मत में कहे अनुसार, तत्वों

---

† शङ्कराचार्य, मध्वाचार्य, रामानुजाचार्य प्रभृति प्राचीन आचार्यों ने स्वीकृत वेदवाक्य ही प्रसिद्ध कहाते हैं।

§ यह हमारे बनाये हुए "वैदिक सिद्धांत" ग्रंथ में स्पष्ट है, देखिये।

* असत्यमप्रतिष्ठंते जगदाहुरनीश्वरं ॥ गी० १६। ८॥
ईश्वरोहमहंभोगी सिद्धोहंबलवान्सुखी ॥ गी० १६। १४॥
तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेवयोनिषु ॥ गी० १६। १९॥
आसुरींयोनिमापन्नाः मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैवकौंतेय ततोयांत्यधमांगतिम् ॥ १६। २०॥

इन गीता वाक्यों का तात्पर्य—जगत् असत्य है (झूठा है) हमही ईश्वर हैं। इत्यादि जोलोग कहते हैं, उन हमारा द्वेष करनेवाले नराधमों को जन्म जन्म में आसुरी योनि में ही हम डालते हैं। वे मूढलोग आसुरी योनि में ही बार बार उत्पन्न होते हुए, कालांतर में, हमको न प्राप्त होते हुए ही अधोगति को, (नित्य नरक को-अंधतम को) प्राप्त होते हैं।

(श्रुति) वेदाहमेतं पुरुषं महांतमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेवंविदित्वाऽतिमृत्युमेति न्यायः पंथाविद्यतेऽयनाय ॥३।८॥

को समझकर, तथा उस प्रकार आचरण करके वेद, गीता में * कहे अनुसार अधोगति को प्राप्त मत करलो।

तेनेदपूर्णं पुरुषेणसर्वं ॥९॥ ततोयदुत्तरतरं य एतद्विदुरमृतास्ते भवंति ॥ अथेतरेदुःखमेवापियंति ॥१०॥

एक एव हरिः पूर्वं ह्यविद्यावशतः स्वयं ॥
अनेको भवतिह्यारात् आदर्शप्रतिबिंबवत् ॥
एवं वदंति ये मूढाः तेपियांत्यधरंतमः ॥ महा गरुड़ पु. अ. २ ॥

प्रकृति को अतिक्रमण कर (प्रकृती के परे) रहनेवाले, सूर्य के समान जिसकी कांति है; ऐसे परमश्रेष्ठ परब्रह्म को हम समझते हैं, तथा इस प्रकार परब्रह्म को जो समझते हैं वही मोक्ष को जाते हैं, दूसरा मार्ग मोक्ष के लिये नहीं है।

इससे भगवान श्रेष्ठ है यही ज्ञान मोक्ष का कारण, उससे विपरीत हम ही ब्रह्म हैं, इत्यादि ज्ञान मोक्ष का साधन नहीं है ऐसा सिद्ध होता है।

यह समस्त जगत् उस पुरुष से पूर्ण भराहुआ है, उस जगत् से जो अत्युत्तम है, उस अत्युत्तम पुरुष को जो समझता है, वही मुक्त होता है, तथा ऐसा जो नहीं समझते हैं वेलोग दुःख को ही पाते हैं।

इससे भी जो लोग, परमात्मा समस्त जगत् से अत्युत्तम है, ऐसा न समझ कर उससे विपरीत समझते हैं याने हमही ब्रह्म हैं इत्यादि समझते हैं उनको दुःखही प्राप्त होगा सुख कभी भी नहीं मिलेगा। तात्पर्य यह है कि, परब्रह्म सर्वोत्तम है यह ज्ञान मोक्ष को साधन है, उससे विपरीत समस्त ज्ञान दुःख को कारण है ऐसा सिद्ध होता है।

सृष्टि होने के पूर्व एक भगवान ही था। वही भगवान अविद्यारूप उपाधी के सम्बन्ध से, ऐना मे प्रतिबिम्ब के समान अनेक रूप से होता है। ऐसा जो मूर्ख लोग कहते हैं वे लोग अंधंतम को जाते हैं।

"परब्रह्म, सर्वोत्तम................

१. उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
२. अतोस्मिलोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥
३. नत्वत्समोस्त्यभ्यधिकः कुतोन्यः ।
४. मत्तःपरतरं नान्यत् किंचदस्ति धनंजय ॥

अर्थ—१ परमात्मा क्षराक्षर पुरुषों से भिन्न तथा उत्तम है ।
२ हम वेदों में तथा पुराणों में पुरुषोत्तम ऐसा कहाते हैं ।
३ अर्जुन कहता है कि, हे कृष्ण ! आपके समान ही कोई नहीं है फिर उत्तम कहांसे रहेगा ?
४ हे धनंजय ! हमारे से उत्तम पदार्थ कोईभी नहीं है ।

श्रुति—१. अग्निर्वै देवानामवमो विष्णुः परमस्तदंतरेण सर्वाअन्यादेवताः ।
(ऐतरेय ब्राह्मण)
२. न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके (श्वेताश्वतर ६।९)
३. न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते (श्वेता ६।८)
४. भुवनेश मीड्यं (श्वेता० ६।७)
५. सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः सर्वस्याधिपतिः (बृह० ४।४।२२)

अर्थ १ देवगणों में सबसे छोटा अग्नि है; और सबसे बड़ा विष्णुभगवान हैं । तथा अग्नि, विष्णु, इनदोनों के बीच में समस्त देवताएं तरतमभाव से हैं । इसे वेद से जीवों में परस्पर भेद है तथा जीव परमात्मा में भेद है । परमात्मा सर्वोत्तम है, जीवगण बहुत छोटे हैं, तथा जीवों में तारतम्य है ऐसा सिद्ध होता है ।

२ उस भगवान का कोई पति याने स्वामी नहीं है, वही सर्वोत्तम है ।

३ भगवान के समान कोई दिखता नहीं है, उससे अधिक भी (उत्तम) दिखता नहीं है, इस श्रुति से भी परमात्मा सर्वोत्तम है, उसके समान या उससे अधिक कोईभी नहीं है, ऐसा सिद्ध होता है ।

*सर्वकर्त्ता, †सर्वज्ञ,

४ समस्त जगत का स्वामी।

५ समस्त जगत् का नियंत्रण करनेवाला, समस्त जगत् का स्वामी।

*१. सहि कर्त्ता (बृह० ४। ३। ११)

२, यतोवा इमानि भूतानि जायंते.......तद्विजिज्ञासस्व (तैत्तरीय)

३. अक्षरात्संभवतीह विश्वं (मुंडक)

४. इदं सर्वमसृजत (तैतरीय)

अर्थ—१ वह भगवान (समस्त पदार्थों का) निर्माणकर्ता है।

२ जिस भगवान से समस्त जगत की उत्पत्ति होती है, उस भगवान का विचार करो।

३ अक्षर नामक परमात्मा से समस्त जगत् उत्पन्न होता है।

४ यह समस्त जगत को परमात्माने उत्पन्न किया है।

गीता—१. अहं सर्वस्य प्रभवः १०।८

२. अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा इत्यादि. ७।६

अर्थ—१ मैं (श्रीकृष्ण) समस्त जगत् का उत्पादक हूं।

२ मैं (श्रीकृष्ण) समस्त जगत् का उत्पादक तथा नाशकर्ता हूं।

सूत्र—१. जन्माद्यस्य यतः (ब्र० सू० १।१।२)

२. न वियदश्रुतेः (ब्र० सू० २।३।१) इत्यादि

अर्थ—१ इस जगत् की उत्पत्ति, स्थिति इत्यादि जिससे होती है वही परब्रह्म है।

२ परमात्मा आकाशादि पदार्थों को उत्पन्न करनेवाला है।

इत्यादि वाक्यों से भगवान सर्वकर्त्ता है, ऐसा सिद्ध होता है।

†१. यः सर्वज्ञः सर्ववित् (मुंडक)

२. वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन (गी० ७। २६)

३. वेदविदेव चाहं (गी० १५। १५)

अर्थ—१ जो भगवान् सर्वज्ञ, याने समस्त पदार्थों को जाननेवाला तथा समस्त प्राप्तिमान भी है।

*चराचरात्मक विश्व से भिन्न,

२ हे अर्जुन ! भूतकालीन (पूर्वकाल में होगये हुए) तथा वर्तमान काल में रहनेवाले समस्त पदार्थों को भी मैं जानता हूं।

३ समस्त वेदों के अर्थ को समझनेवाला मैं ही हूं।

इत्यादि वाक्यों से भगवान सर्वज्ञ है ऐसा सिद्ध होता है।

*१, द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्न्यो अभिचाकशीति ॥
(मु० ३। १। १)

२, अजो ह्येको जुषमाणोनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोन्यः ॥

गीता—१, उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः (१५। १७)

२, तमसः परमुच्यते (१३। १७)

३, महतः परमव्यक्तं अव्यक्तात्पुरुषः परः (काठ १। ३। ११)

सूत्र—१, भेदव्यपदेशात्। (१। ३। ५)

२, भेदव्यपदेशाचान्यः (१। १। २१) इत्यादि

अर्थ—१ देह को आश्रयकर रहेहुए, जीव परमात्माओं में से, जीव (देह में रहने के लिये) कर्मफल का अनुभव करता है, परमात्मा (स्थिति के लिये) कर्मफल का अनुभव नहीं करता है।

२ एक पुरुष प्रकृती का सेवन करतेहुए रहता है, दूसरा प्रकृती को छोड़ कर रहता है।

गीता—१ परमात्मा जीवसे भिन्न है।

२ परमात्मा (तमसः) प्रकृती से भिन्न है।

३ महदहंकार अव्यक्त इत्यादिकों से परमात्मा भिन्न है।

सूत्र—१ जीवसे, परमात्मा भिन्न है, ऐसा वेद में कहा है।

२ वेद में कहा होने से जीव परमात्मा से भिन्न है।

इन वाक्यों से, परमात्मा चराचरात्मक विश्व से भिन्न है, ऐसा सिद्ध होता है।

*सर्वशक्तिमान्, $ज्ञानानंदरूपी, £सर्वस्वामी, §सर्वनियामक, ‖सर्वाधार, ¶कर्मफलदाता,

*१, सर्वोपेताच तद्दर्शनात (ब्र० सू० २।१।३१)

२, सर्वकर्मा, सर्वकामः सर्वगंधः सर्वरसः (छां० ३।१४।४)

३, परास्य शक्तिः विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रियाच (श्वेता)

४, ईश्वरस्सर्वभूतानां हृद्देशेर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया॥

५, सर्वस्य चाहं हृदि संन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च॥

अर्थ—१ भगवान् समस्त शक्ती से युक्त है।

२—समस्त कार्य करने को समर्थ है इत्यादि।

३—भगवान् की शक्ति बहुत प्रकार की है, वह स्वाभाविक है, कल्पित नहीं है। वह शक्ति ज्ञानरूप, बलरूप, तथा क्रियारूप भी है।

४- भगवान् सभोंके हृदय में बासकर, समस्त कर्म कराता है।

५—मैं (कृष्ण) प्राणिमात्रों के हृदय में वास करता हूं। ज्ञान, स्मरण, इत्यादि मेरे सेही होते हैं।

इसप्रकार श्रुति, सूत्र, गीता से, भगवान् सर्वशक्तिमान है, ऐसा सिद्ध होता है।

$१, सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म इत्यादि। अर्थ १ परब्रह्म ज्ञानानंदरूपी है।

२, ज्ञानं ज्ञानवतामहं। १०।६८ २—मैं ज्ञानरूपी हूं।

इन वाक्यों से ब्रह्म ज्ञानानंदरूपी है, ऐसा सिद्ध होता है।

£१, सहि सर्वाधिपतिः (वह भगवान् सबका स्वामी है)

२, सर्वस्येशानः (सबों का स्वामी है)

§३, ईश्वरः सर्वभूतानां १८।६१ (सबों का नियामक है)

‖४, सर्वभूताधिवासः
५, द्युभ्वाद्यायतनं स्वशब्दात् (१।३।१)
६, मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रेमणिगणा इव
} भगवान सबों का आधार भूत है।

¶७, कर्माध्यक्षः (मैं) - पुण्यपापरूपी कर्मों का स्वामी है).

*कर्मबंधविधुर, §सकलवेदप्रतिपाद्य, इत्यादि अनेक गुणों से युक्त है।

जीवगण सर्वदा, (हरहमेश) उस परमात्मा से भिन्न, उसके आधीन, है तथा प्रकृतिबंध से युक्त है। उस प्रकृतिबंध से छूटकर नित्य सुख की प्राप्ति करलेनी चाहिये।

८, पुण्येन पुण्यं लोकं नयति पापेन पापं (कर्मानुसार फल देनेवाला है)

*९, न कर्मणा वर्धते नो कनीयान् (कर्मोंसे वृद्धि अथवा न्यूनता प्राप्त नहीं होती है)।

१०, नानवाप्तमवाप्तव्यं ३।२२ (कर्म से प्राप्त कर लेनेका कुछ भी नहीं है)।

इन वाक्यों से भगवान् सबका स्वामी, सबों का नियामक, सर्वाधार, कर्म के अनुसार फल देनेवाला, कर्म से बद्ध न रहनेवाला है, ऐसा सिद्ध होता है।

§१, वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः (गी०)

२, सर्वे वेदा यत्पदमामनंति (काठ०)

३, ब्रह्मसूत्र प्रथमाध्याय।

अर्थ—१ समस्त वेदों से समझा जानेवाला मैं ही हूं।

२ समस्त वेद जिसका प्रतिपादन करते हैं, वही ब्रह्म है।

३ भगवान समस्त वैदिक शब्दों से समझा जानेवाला है।

इन वाक्यों से भगवान् समस्त वेदों से प्रतिपाद्य है, यह सिद्ध होता है।

१, यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिं॥
तदा विद्वान् पुण्य पापे विधूय निरंजनः परमं साम्यमुपैति (मुंडक)

२, तमेवं विद्वानमृत इह भवति। नान्यः पंथा विद्यतेऽयनाय (पुरुषसूक्त)

३, जुष्टं यदा पश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमितिवीतशोकः (मुंडक)

४, पृथगात्मानं प्रेरितारं च मत्वा जुष्टस्ततस्तेनामृतत्वमेति (श्वेता०)

५, नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधाति कामान्।
तमात्मस्थं येनु पश्यंतिधीराः तेषांशांतिः शाश्वतीनेतरेषां ॥काठ॥

यह शाश्वत सुख का अनुभव प्राप्त करलेने के लिये, "भगवान् सर्वोत्तम है, सर्व जगत का कर्ता है, अपने से भिन्न है, सुवर्ण वर्ण से युक्त है" इत्यादि ज्ञान + कारण है।

तात्पर्य-१ जीव, सुवर्ण के समान वर्ण युक्त जगत्कर्ता, चतुर्मुख ब्रह्मा को भी उत्पन्न करनेवाला, स्वामी, ऐसे परमात्मा को जब देखता हैं, (समझता है) तब वह मोक्ष को जाता है।

२ उस भगवान् को, पूर्वोक्त प्रकार, चन्द्रसूर्यादिकों को उत्पन्न करने वाला, सहस्रशीर्षत्वादि पुरुषसूक्त में वर्णित अनेक गुणों से युक्त, ऐसा जो समझता है, वही मुक्त होता है।

इस ज्ञान के अतिरिक्त दूसरा मार्ग मोक्ष के लिये नहीं है।

३ जो अपने से भिन्न, सबोंसे सेव्य तथा सर्वस्वामी, ऐसे भगवान को समझता है, वह मुक्त होता है।

४ चराचरात्मक विश्व से भिन्न, सर्व स्वामी, सबोंको प्रेरणा करने वाला, ऐसा जो भगवान् को समझते हैं, वही मुक्त होते हैं।

५ नित्य पदार्थों को नित्यत्व देनेवाले, चेतन पदार्थों को चैतन्य देनेवाले भगवान् को अपने अन्दर नियामक होकर रहनेवाला ऐसा समझते हैं, (देखते हैं) उन्ही को नित्य शांतिरूप मोक्ष की प्राप्ति होती है। इससे विपरीत समझनेवाले अन्यलोगों को नित्य शांतिरूप मोक्ष नहीं मिलता है।

गीता—उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः........योलोकत्रयमाविश्य बिभर्ति

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमं........

एतद्बुध्वा बुद्धिमान् स्यात् कृतकृत्यश्च भारत ॥१५॥

तात्पर्य-१ क्षराक्षर पुरुषों से उत्तम, समस्त जगत् को रक्षण करनेवाला, इत्यादि धर्मों से युक्त भगवान को जो समझता है। वही मुक्त (कृत्यकृत्य) होता है।

वेद—१, कर्मणा ज्ञानमातनोति

२, आत्मा वारे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मंतव्यो निदिध्यासितव्यः ॥

यह ज्ञान स्वस्व वर्णाश्रमोचित कर्म कर, शुद्ध हुए अंतःकरणसे, भक्ति पूर्वक श्रवण, मनन, ध्यान करने से *उत्पन्न होता है, ऐसा वेद, गीता, ब्रह्मसूत्र इन प्रस्थानत्रयों में कहा है।

इसलिये गंगादि तीर्थ सच्चे हैं, यज्ञादिकर्म सच्चे हैं, इंद्रादिदेव, वेद, ब्राह्मणादिवर्ण तथा ब्रह्मचर्यादि आश्रम सच्चे हैं। इतनाही क्या समस्त †जगत् भी सच्चा है, ऐसा स्वीकार कर, समस्त जगत का निर्माणादि कर्ता जो भगवान् उसके प्रीत्यर्थ स्वस्व वर्णाश्रम विहित कर्म करके, जीवेश्वर का

३, आचार्यवान्पुरुषो वेद।

गीता — तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया॥
उपदेक्ष्यंति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥४। ३४॥
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विंदति मानवः॥
भक्त्या मामभिजानाति

अर्थ—१ स्वस्व वर्णाश्रम विहित कर्माचरण रूप, भगवान के पूजन से ज्ञान की प्राप्ति होती है।

२ भगवान् का, श्रवण, मनन, ध्यान करके अपरोक्ष ज्ञान संपादन करना चाहिये।

३ सद्गुरु समागम से हमारा ज्ञान उत्पन्न होता है।

गीता—१ नमस्कार (प्रणाम) प्रश्न तथा सेवा करने से, वे तत्व को समझने वाले ज्ञानीलोग, तुमको तत्वों का उपदेश करेंगे।

स्वस्व वर्णाश्रम विहित कर्माचरण रूप, भगवान् के पूजन से मनुष्य ज्ञान रूप सिद्धी की प्राप्ति करलेता है। —(भक्ती से हमको समझता है) भक्तिपूर्वक श्रवणादि करने से हमारा (कृष्ण का) ज्ञान होता है।

† १, विश्वं सत्यं (ऋग्वेद)

२, तदेतत्सत्यं (मंडूक)

३, असत्यमप्रतिष्टं ते (गीता)

४, जन्माद्यस्ययतः (ब्र० सू० १।१।२)

तात्पर्य—भगवान ने निर्माण कियाहुआ जगत् सच्चा है, झूठा नहीं है।

‡ भेदज्ञान रहनेवाले सद्गुरु से सच्छास्त्रों का श्रवण कर, दुर्मतों के श्रवणादिकों से प्राप्त हुए संशय भ्रमादिकों का, ब्रह्ममीमांसाशास्त्र में कहे अनुसार (हमारे पूर्व प्रदर्शित पथ के अनुसार) युक्तियों से निराकरण कर तत्व निश्चय कर लेना चाहिये।

तत्व निश्चय होने के उपरान्त उन निश्चित तत्वों के ध्यान से, ईश्वर का साक्षात्कार संपादन कर, निर्मल भक्ती के द्वारा भगवान् का §प्रसाद प्राप्त करके प्रकृतिबंधसे छूटकर शाश्वतसुख का अनुभव प्राप्त करलेना चाहिये।

---

‡ वेद—अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्ति.......प्रोक्तान्येनैव सुज्ञानायप्रेष्ठ।

अर्थ—१ 'अनन्यप्रोक्ते' 'जीव भगवान् से अभिन्न है' ऐसा समझनेवाले गुरुने उपदेश करने से गति की (ज्ञान) प्राप्ति नहीं होती है, 'अन्येन' 'जीव ईश्वर से भिन्न है' ऐसा समझनेवाले सद्गुरु ने किया हुआ उपदेश ही उत्तम ज्ञान को कारण है।

सारांश— जीवेश्वर का अभेद ज्ञान रहनेवाले अद्वैति गुरुने किया हुआ उपदेश ज्ञान को कारण नहीं है।

जीवेश्वर का भेद ज्ञान रहनेवाले द्वैतवादी सद्गुरु ने कियाहुआ उपदेश ही उत्तम ज्ञान को कारण है, ऐसा इस वेद वाक्य से सिद्ध होता है।

§ १—धातुः प्रसादान्महिमानमात्मनः

२—यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः

३—मत्प्रसादात् तरिष्यसि

तात्पर्य—भगवान् के प्रसाद से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

इसप्रकार समस्त भूतों के कल्याणार्थ, हमने वेद, ब्रह्मसूत्र, गीता, इन प्रस्थानत्रयों को संमत रहनेवाला तत्वों का उपदेश किया है। इसके ऊपर यदि किसी को संशय या आक्षेप रहे सो उसका समाधान करने के लिये हम सिद्ध हैं।



बिनामौल्यं

पुस्तक प्राप्तिस्थानम्

श्रीमद्विष्णुपाद विद्यापीठ, गया।

किंच बेंगलूरु बसवनगुडि उत्तरादिमठ एन्. एम्. एस्.

सभा लैब्रेरियन् बि. एन्. देशिकाचार्यः

मागध शुभङ्कर यंत्रालय गया में, पं० राजकिशोर दीक्षित द्वारा मुद्रित।

